अंक : 2, दिसम्बर 2013

LEISA INDIA

लीज़ा इण्डिया

विशेष हिन्दी संस्करण

लीज़ा इण्डिया

विशेष हिन्दी संस्करण
दिसम्बर 2013, अंक 2

यह अंक लीज़ा इण्डिया टीम के साथ मिलकर जी०ई०ए०जी० द्वारा प्रकाशित की जा रही है, जिसमें लीज़ा इण्डिया में प्रकाशित अंग्रेजी भाषा के कुछ मूल लेखों का हिन्दी में अनुवाद एवं संकलन है।

गोरखपुर एनवायरन्मेन्टल एक्शन ग्रुप
224, पुर्दिलपुर, एम०जी० कालेज रोड,
पोस्ट बाक्स 60, गोरखपुर- 273001
फोन : +91-551-2230004, फैक्स : +91-551-2230005
ईमेल : geagindia@gmail.com
वेबसाइट : www.geagindia.org

ए.एम.ई. फाउण्डेशन
नं० 204, 100 फीट रिंग रोड, 3rd फेज, 2nd ब्लाक, 3rd स्टेज,
बनशंकरी, बैंगलोर- 560085, भारत
फोन : +91-080-26699512, +91-080-26699522
फैक्स :+91-080-26699410,
ईमेल : amebang@giasbg01.vsnl.net.in

लीज़ा इण्डिया
लीज़ा इण्डिया अंग्रेजी में प्रकाशित त्रैमासिक पत्रिका है, जो इलिया की सहभागिता से ए.एम.ई. फाउण्डेशन बैंगलोर द्वारा प्रकाशित होती है।

मुख्य सम्पादक : के.वी.एस. प्रसाद, ए.एम.ई. फाउण्डेशन
प्रबन्ध सम्पादक : टी.एम.राधा., ए.एम.ई. फाउण्डेशन

अनुवाद समन्वय
अर्चना श्रीवास्तव, जी.ई.ए.जी.
अरूण कुमार शिवराय, ए.एम.ई. फाउण्डेशन

प्रबन्धन
रुक्मिणी जी.जी., ए.एम.ई. फाउण्डेशन

लेआउट एवं टाईपसेटिंग
राजकान्ती गुप्ता, जी.ई.ए.जी.

छपाई
कस्तूरी ऑफसेट, गोरखपुर

आवरण फोटो
जी.ई.ए.जी.

लीज़ा पत्रिका के अन्य सम्पादन
लैटिन, अमेरिकन, पश्चिमी अफ्रीकन, ब्राज़ीलियन एवं चाइनीज संस्करण

लीज़ा इण्डिया पत्रिका के अन्य क्षेत्रीय सम्पादन
तमिल, कन्नड़, उड़िया एवं तेलगू

सम्पादक की ओर से लेखों में प्रकाशित जानकारी के प्रति पूरी सावधानी बरती गई है। फिर भी दी गई जानकारी से सम्बन्धित किसी भी त्रुटि की जिम्मेदारी उस लेख के लेखक की होगी।

माइजेरियर के सहयोग एवं जी०ई०ए०जी० के समन्वयन में ए०एम०ई० द्वारा प्रकाशित

प्रिय पाठक

आप सभी को लीज़ा इण्डिया टीम की तरफ से हार्दिक शुभकामनाएं। आपके समक्ष हिन्दी अनुवाद का दिसम्बर 2013 अंक प्रस्तुत है। आपके उत्साहवर्धक सहयोग के लिए धन्यवाद। यह अत्यन्त हर्ष का विषय है कि जर्मनी की एक दाता संस्था माइजेरियर इस गतिविधि को 2011–13 की अवधि के लिए सहयोग प्रदान करने पर सहमत हो गई है। इस सहयोग के साथ हम अधिकाधिक पाठकों और जमीन से जुड़ कर काम करने वाली संगठनों तक अपनी पहुँच बनाना चाहते हैं। हमें यह पत्रिका प्रेषित करते हुए अत्यन्त प्रसन्नता है। कृपया पत्रिका के साथ संलग्न फार्म को भरकर हमें वापस भेजें। हमें यह बताते हुए प्रसन्नता है कि हिन्दी अंक को अधिक प्रशंसा मिल रही है। स्थानीय भाषा में होने के कारण बहुत से पाठक इसे अच्छे ढंग से समझ पा रहे हैं। हमें वास्तविक लेखों के लिए भी सकारात्मक प्रतिक्रिया मिल रही है।

हम उन सभी पाठकों के प्रति अत्यन्त अनुग्रहित हैं, जिन्होंने हमारे सर्वेक्षण पर अपनी प्रतिक्रिया दी व अपने विचारों को साझा किया। हम आगे भी उनसे निरन्तर बात–चीत करते रहेंगे। यदि आपका कोई किसान मित्र इस पत्रिका को पढ़ना चाहता है तो कृपया हमें उसका पत्र–व्यवहार का सम्पूर्ण पता लिख कर भेजें। उसे पत्रिका प्रेषित करते हुए प्रसन्नता होगी।

समृद्ध व हर्षयुक्त नव वर्ष की ढेरों शुभकामनाएं!

लीज़ा इण्डिया टीम
दिसम्बर, 2013

लीज़ा

कम बाहरी लागत एवं स्थायी कृषि पर आधारित लीज़ा उन सभी किसानों के लिए एक तकनीक और सामाजिक विकल्प है, जो पर्यावरण सम्मत विधि से अपनी उपज व आय बढ़ाना चाहते हैं क्योंकि लीज़ा के अन्तर्गत मुख्यतः स्थानीय संसाधनों और प्राकृतिक तरीकों को अपनाया जाता है और आवश्यकतानुसार ही बाह्य संसाधनों का सुरक्षित उपयोग किया जाता है।

लीज़ा पारम्परिक और वैज्ञानिक ज्ञान का संयोग है, जो विकास के लिए आवश्यक वातावरण तैयार करता है। यह भी मुख्य है कि इसके द्वारा किसानों की क्षमता को विभिन्न तकनीकों से मजबूत किया जाता है और खेती को बदलती जरूरतों और स्थितियों के अनुकूल बनाया जाता है, साथ ही उन महिला एवं पुरुष किसानों व समुदायों का सशक्तिकरण होता है, जो अपने ज्ञान, तरीकों, मूल्यों, संस्कृति और संस्थानों के आधार पर अपना भविष्य बनाना चाहते हैं।

बेहतर आय के लिए सामूहिक विपणन

के.डी. अन्धाले व एस.एम. बागले

वृन्दावन पुष्प उत्पादक संघ ने यह प्रदर्शित कर दिया है कि एक छोटी सहायता के साथ गरीब किसानों को संगठित कर सामूहिक प्रयास से उनकी आजीविका को समृद्ध किया जा सकता है।

ए.एम.ई. फाउण्डेशन, डक्कन के अर्द्धशुष्क क्षेत्र के लघु सीमान्त किसानों के बीच विकास एजेन्सियों के जुड़ाव, अनुभव के प्रसार, ज्ञानवर्द्धन एवं विभिन्न कृषि विकल्पों की उत्पत्ति द्वारा पर्यावरणीय कृषि को प्रोत्साहित करता है। यह कम लागत प्राकृतिक संसाधन प्रबन्धन के लिए पारम्परिक ज्ञान व नवीन तकनीकों के सम्मिश्रण से आजीविका स्थाईत्व को बढ़ावा देता है।

ए.एम.ई. फाउण्डेशन गाँव में इच्छुक किसानों के समूह को वैकल्पिक कृषि पद्धति तैयार करने व अपनाने में सक्षम बनाने हेतु उनके साथ जुड़कर सघन रूप से काम कर रही है। यह स्थान अभ्यासकर्ताओं व प्रोत्साहकों के लिए उनकी देखने–समझने की क्षमता में वृद्धि करने हेतु सीखने की परिस्थिति के तौर पर है। इससे जुड़ी स्वयं सेवी संस्थाओं और उनके नेटवर्क को जानने के लिए इसकी वेबसाईट देखें–www.amefound.org

गोरखपुर एनवायरन्मेन्टल एक्शन ग्रुप एक स्वैच्छिक संगठन है, जो स्थाई विकास और पर्यावरण से जुड़े मुद्दों पर सन् 1975 से काम कर रहा है। संस्था लघु एवं सीमान्त किसानों, आजीविका से जुड़े सवालों, पर्यावरणीय संतुलन, लैंगिक समानता तथा सहभागी प्रयास के सिद्धान्तों पर सफलतापूर्वक कार्य कर रही है। संस्था ने अपने 30 साल के लम्बे सफर के दौरान अनेक मूल्यांकनों, अध्ययनों तथा महत्वपूर्ण शोधों को संचालित किया है। इसके अलावा अनेक संस्थाओं, महिला किसानों तथा सरकारी विभागों का आजीविका और स्थाई विकास से सम्बन्धित मुद्दों पर क्षमतावर्धन भी किया है। आज जी०ई०ए०जी० ने स्थाई कृषि, सहभागी प्रयास तथा जेण्डर जैसे विषयों पर पूरे उत्तर भारत में अपनी विशिष्ट पहचान बनाई है।

माइजेरियर वर्ष 1958 में स्थापित जर्मन कैथोलिक बिशप की संस्था है, जिसका गठन विकासात्मक सहयोग के लिए हुआ था। पिछले 50 वर्षों से माइजेरियर अफ्रीका, एशिया और लातिन अमेरिका में गरीबी के विरूद्ध लड़ने के लिए प्रतिबद्ध है। जाति, धर्म व लिंग भेद से परे किसी भी मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए यह हमेशा तत्पर है। माइजेरियर गरीबी और हानियों के विरूद्ध पहल करने के लिए प्रेरित करने में विश्वास रखता है। यह अपने स्थानीय सहयोगियों, चर्च आधारित संगठनों, गैर सरकारी संगठनों, सामाजिक आन्दोलनों और शोध संस्थानों के साथ काम करने को प्राथमिकता देता है। लाभार्थियों और सहयोगी संस्थाओं को एक साथ लेकर यह स्थानीय विकासात्मक क्रियाओं को साकार करने और परियोजनाओं को क्रियान्वित करने में सहयोग करता है। यह जानने के लिए कि स्थिर चुनौतियों की प्रतिक्रिया में माइजेरियर किस प्रकार अपनी सहयोगी संस्थाओं के साथ काम कर रहा है। इसकी वेबसाइट देखें (www.misereor.de; www.misereor.org)

अनुक्रमणिका

विशेष हिन्दी संस्करण, दिसम्बर 2013

5 बेहतर आय के लिए सामूहिक विपणन
के.डी. अन्धाले व एस.एम. बागले

8 कीट–पतंगे या नुकसानदायक कीट फैसला केवल अभ्यास का
जे. कृष्णन्

11 जलवायु परिवर्तन के साथ मुकाबला
सुमन सहाय

14 कीड़ो के साथ जीवन–यापन
एल. नारायण रेड्डी

15 सामूहिक खेती सामूहिक लाभ महिला किसान समूह की एक कहानी
सुरेश कन्ना

18 गरीबी निवारण
पी.वी. सतीश

कीट–पतंगे या नुकसानदायक कीट फैसला केवल अभ्यास का

जे. कृष्णन्

अधिकांशतः खेती के तरीकों पर ही कीट व्यवहार निर्भर करता है। पौधे और कीड़े दोनों परस्पर एक– दूसरे पर निर्भर करते हैं। एक तरफ पौधे कीड़ों को जहां भोजन उपलब्ध कराते हैं, वहीं पौधों को आवश्यक पारिस्थितिकी सेवाएं प्रदान करने के सन्दर्भ में कीड़े महत्वपूर्ण होते हैं। इसीलिए किसानों की दृष्टि से फसल प्रबन्धन एक बड़े पारिस्थितिकी तंत्र प्रबन्धन का एक भाग है। एक पारिस्थितिकी तंत्र के अन्तर्गत आने वाले विभिन्न जीवों के आपसी सम्बन्ध की गहरी समझ होनी आवश्यक है।

जलवायु परिवर्तन के साथ मुकाबला

सुमन सहाय

वैश्विक उष्मीकरण व जलवायु परिवर्तन के कारण खाद्य, जल व स्वास्थ्य सुरक्षा सर्वाधिक प्रभावित होगी और इसके संयुक्त व अलग–अलग दोनों प्रभाव दिखेगें। विकासशील देशों में उष्ण कटिबंधीय व उप उष्णकटिबंधीय दोनों क्षेत्रों में सबसे खराब स्थिति होने की संभावना हैं। ऐसी स्थिति में यह आवश्यक है कि हम बिना समय बरबाद किये खाद्य व जल सुरक्षा के लिए जलवायु लचीले तंत्रों को विकसित करने व उनको क्रियान्वित करने की प्रक्रिया आरम्भ कर दें।

सामूहिक खेती, सामूहिक लाभ महिला किसान समूह की एक कहानी

सुरेश कन्ना

भूमि पर विशेषकर गरीब महिलाओं की पहुंच ना के बराबर है। यह समस्या तब और भी भयंकर हो जाती है, जब महिलाएं अकेली हों या परिवार से उपेक्षित हों। ऐसी स्थिति में उन्हें भूखमरी और बेहद तंगहाली का जीवन गुजारना पड़ता है। इन सारी समस्याओं व कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुए तमिलनाडु की महिलाओं ने संगठित होकर सफलता पाई है। उन्होंने सामूहिक खेती कर न सिर्फ परिवार की खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित की है वरन् समाज में भी उन्हें सम्मान मिला है।

गरीबी निवारण

पी.वी. सतीश

आज जबकि प्रत्येक व्यक्ति ''हरित अर्थव्यवस्था'' के बारे में बात कर रहा है, क्या हम यह देख पा रहे हैं कि उसमें अवधारणा की ही विशेष आलोचना हो रही है। यद्यपि कि इन कठिन शब्दावलियों को समझना मुश्किल है, लेकिन बहुत से लोग इससे असहज महसूस कर रहे हैं। लोगों का यह मानना है कि वास्तव में ''हरित अर्थव्यवस्था'' ''लालची अर्थव्यवस्था'' है।

हमारी बात...

लीज़ा हिन्दी दिसम्बर, 2013 अंक आपके समक्ष प्रस्तुत है। यह अंक उन सभी बिन्दुओं पर आधारित है, जो छोटे, मझोले, सीमान्त, भूमिहीन व महिला किसानों की आजीविका में स्थायित्व लाते हुए उन्हें समाज की मुख्य धारा से जोड़ने में कारगर सिद्ध हो सकते हैं।

अंक का पहला लेख के.डी. अन्धाले व एस.एम. वागले द्वारा लिखित 'बेहतर आय के लिए' सामूहिक विपणन' जहाँ सामूहिकता व संगठन से होने वाले लाभों को व्याख्यायित करता है, बिचौलियों की भूमिका को हटाता है वहीं कीट–पतंगों के ऊपर व्यापक समझ व उसके प्रबन्धन से फसली एवं मानव जीवन पर होने वाले लाभों को बताता लेख 'कीट पतंगे या नुकसान दायक कीट : फैसला केवल अभ्यास का' है जो श्री जे. कृष्णन् द्वारा लिखित है।

जलवायु परिवर्तन के स्थानीय, वैश्विक स्तर पर मानव, पशु एवं फसलों सहित सम्पूर्ण कार्य व्यवहार पर पड़ने वाले प्रभावों एवं उससे निपटने के प्रयासों को रेखांकित करता सुश्री सुमन सहाय का लेख 'जलवायु परिवर्तन के साथ मुकाबला है' तो पत्रिका के स्थाई कॉलम में श्री एल. नारायण रेड्डी ने कीड़ों के साथ जीवन–यापन की वकालत की है।

श्री सुरेश कन्ना द्वारा लिखित लेख 'सामूहिक खेती, सामूहिक लाभ' सामाजिक विसंगतियों से जुझने एवं सफलता हासिल करने में महिला समूहों की भूमिका को प्रदर्शित करता है तो पत्रिका का पांचवा व आखिरी लेख श्री पी. वी. सतीश द्वारा लिखित 'गरीबी निवारण' है, जिसमें समाज के हाशिये पर रहने वाले लोगों की गरीबी वास्तव में दूर करने हेतु स्थानीय स्तर पर छोटी–छोटी संस्थाओं द्वारा किये जाने वाले प्रयासों को दर्शाया गया है। आशा है उपरोक्त सभी लेख पत्रिका की उपयोगिता को बढ़ाने में सहायक सिद्ध होंगे।

लीज़ा पत्रिका हिन्दी की उपयोगिता जानने हेतु पाठकों के बीच कराये गये एक सर्वेक्षण में जिन 70 उत्तरदाताओं ने प्रतिउत्तर दिया। हमें यह बताते हुए हर्ष हो रहा है कि उत्तरदाताओं ने सिर्फ विकास व शैक्षणिक कार्यों से जुड़े लोग, वरन् किसान व विद्यार्थी भी शामिल हैं। आये उत्तरों के आधार पर हम यह भी कह सकते हैं कि लीज़ा हिन्दी पत्रिका में दी गई पाठ्य सामग्रियाँ किसानों एवं गैर सरकारी संगठनों से जुड़े लोगों के साथ–साथ शोध संस्थानों, शिक्षकों, विद्यार्थियों एवं सरकारी संस्थानों में भी समान रूप से उपयोगी है।

पत्रिका पर बहुमूल्य सुझावों की प्रतीक्षा में ...

• सम्पादक मण्डल

बेहतर आय के लिए सामूहिक विपणन

के०डी० अन्धाले व एस०एम० वागले

वृन्दावन पुष्प उत्पादक संघ ने यह प्रदर्शित कर दिया है कि एक छोटी सहायता के साथ गरीब किसानों को संगठित कर सामूहिक प्रयास से उनकी आजीविका को समृद्ध किया जा सकता है।

महाराष्ट्र राज्य के थाणे जनपद का विक्रमगढ़ मुख्यतः आदिवासी बहुल क्षेत्र है, जिनकी आजीविका खेती पर आधारित है। यद्यपि इस क्षेत्र में प्रचुर मात्रा में वर्षा होती है, फिर भी भूमि की ढलवां प्रकृति के कारण पानी का नुकसान होने की वजह से पानी का संकट यहाँ हमेशा ही विद्यमान रहता है। यहां खेती मुख्यतः वर्षा आधारित होती है और सिर्फ खरीफ ऋतु में ही फसल उगाई जाती है। इस क्षेत्र की मुख्य फसल धान है। कुछ क्षेत्रों में बाजरा, टांगुन, चना अरहर आदि की खेती भी होती है, जिसका क्षेत्रफल बहुत न्यून है। कम उत्पादकता के चलते यहां पर रहने वाले परिवारों के लिए वर्ष भर खाने हेतु अनाज उत्पादित नहीं हो पाता है। खेती (खरीफ) के अतिरिक्त अन्य ऋतुओं में यहां के आदिवासी आस–पास के कस्बों व शहरों में दैनिक मजदूरी हेतु पलायन कर जाते हैं।

एक पहल

वर्ष 2004 में एक स्वयंसेवी संस्था ग्रामीण क्षेत्रों के लिए तकनीकी हस्तान्तरण महाराष्ट्र संस्थान (मित्रा) ने बायफ, पूना के सहयोग से कृषि–वानिकी के 'वादी' आदर्श/प्रतिरूप को प्रोत्साहित करना प्रारम्भ कर दिया। इस 'वादी' प्रतिरूप में, एक एकड़ के खेत में औद्यानिक फसलों की खेती मुख्य फसल के तौर पर करते हुए उनके साथ कृषिगत फसलें अन्तः फसल के रूप में ली जाती हैं तथा छोटी इमारती लकड़ियों, चारा और गैर इमारती लकड़ियों के उत्पादन के लिए चारों तरफ मेड़ पर वृक्ष लगा दिये जाते हैं। 'वादी' के अन्तर्गत लिये गये खेत में मृदा व जल संरक्षण हेतु गतिविधियाँ भी की गयीं और सिंचाई हेतु छोटे स्तर पर खेत में तालाब, जलकुण्ड व खुले कुंओं को बनाने का प्रयास किया गया। मुख्य गतिविधि के रूप में औद्यानिक के साथ बड़ी मात्रा में जमीन आधारित अन्य गतिविधियों को अपनाकर छोटी अवधि में ही उनकी आमदनी में उल्लेखनीय वृद्धि दर्ज की गयी।

फलदार वृक्षों की खेती करने वाले लोगों को प्रोत्साहित करने हेतु छोटे स्तर पर फूलों की खेती उनकी एक अन्य गतिविधि थी। इस गतिविधि से उनको विविध प्रकार के लाभ थे, जहां प्रारम्भ से ही उनको फूलों से आय मिलने लगी वहीं 6 वर्ष के बाद उन्हें फलों से भी आमदनी प्राप्त होने लगी। इसके साथ ही फूलों के निरन्तर उत्पादन से लोग 'वादी' परिक्षेत्र में रोजाना जाने लगे, जिससे औद्यानिक फसलों की देख–भाल भी निरन्तर होने लगी।

चमेली की खेती में सक्रियता से लगे परिवार के सदस्य

''वर्ष 2005 में 11 परिवारों के साथ शुरु की गई फूलों की खेती से आज 430 परिवार जुड़ चुके हैं। ''

विक्रमगढ़ के किसानों के लिए फूलों की खेती एक परम्परागत गतिविधि के तौर पर नहीं थी। इस कारण प्रारम्भ में इसका विरोध हुआ। बहुत से परिवार फूलों की खेती की सफलता के प्रति संशकित थे, क्योंकि वे इस गतिविधि की खेती, विपणन और आयजनक क्षमता से परिचित नहीं थे। इस बात को ध्यान में रखते हुए सर्वप्रथम टोले स्तर पर एक बैठक आयोजित कर लोगों को इसकी आयजनक क्षमता से परिचित कराया गया। किसानों को खेती से सम्बन्धित सभी पहलुओं से जुड़ी जानकारियाँ उपलब्ध कराई गयीं। आस–पास के क्षेत्रों में होने वाली फूलों की खेती का क्षेत्र भ्रमण भी कराया गया। इस गतिविधि से होने वाले आर्थिक लाभ से लोगों को परिचित कराने में ये क्षेत्र भ्रमण बहुत उपयोगी साबित हुए।

वर्ष 2005 में 11 परिवारों ने इसकी खेती करने का मन बनाया और खेती प्रारम्भ की। अगस्त के महीने में पौधरोपण का कार्य पूरा कर लिया गया। इन परिवारों को उच्च गुणवत्ता वाले पौधों के साथ अन्य निवेश जैसे– खाद व कीटनाशक भी उपलब्ध कराये गये। 0.05 हेक्टेयर के परिक्षेत्र में चमेली के 200 पौधे लगाये गये, जिसमें कुल लागत रू0 2500/– आयी। सिंचाई के लिए उनका जुड़ाव आदिवासी विकास विभाग से कराये जाने पर इन परिवारों ने फूलों की खेती में रूचि प्रदर्शित की। विशेषज्ञों द्वारा फूलों की खेती का नियमित भ्रमण कर किसानों को आवश्यक दिशा–निर्देश दिये गये।

संघ की बैठक

पौधरोपण के 6 माह बाद चमेली के फूलों की पहली बार तुड़ाई कर उनकी बिक्री की गयी। ये फूल स्थानीय बाजार में बेचे गये, जिससे लोगों को शुद्ध रू0 21000/– से रू0 25320/– की आमदनी हुई। यह उनकी अतिरिक्त आमदनी थी, जिसने अन्य लोगों को भी इस गतिविधि को अपनाने हेतु प्रोत्साहित किया। वर्ष 2005–06 में 11 परिवारों ने इस गतिविधि को प्रारम्भ किया था, जो अब बढ़कर 350 हो गयी।

फूल उगाने वाले परिवारों की महिलाएं फूलों की खेती के उद्योग से जुड़े सभी पहुलओं अर्थात् खेती से लेकर उनकी पैकिंग में सक्रियता से जुड़ी रहीं। कुछ महिलाएं इन फूलों से सुन्दर गजरे व माला भी बनाकर उन्हें स्थानीय बाजार में बेचने लगी।

फूल उत्पादक संघ का गठन

किसानों ने यह महसूस किया कि विक्रमगढ़ के स्थानीय बाजार में फूलों का बहुत अच्छा मूल्य नहीं मिल रहा है। बेहतर मूल्य प्राप्त करने के लिए इन लोगों ने ऐसी गतिविधियां प्रारम्भ की, जो उत्पादों के मूल्य में वृद्धि कर सकें। अतः महिलाओं को बुके (फूलों का गुच्छा) व गजरा बनाने हेतु प्रशिक्षित किया गया लेकिन अभी भी उन्हें बहुत अच्छा मूल्य नहीं मिल पा रहा था। स्थानीय बाजार से मिलने वाली अनियमित आय के कारण इनकी स्थितियां खराब होने लगी थीं। यहाँ तक कि कुछ व्यवसायियों ने भुगतान भी नहीं किया। तब किसानों ने बेहतर बाजार खोजना प्रारम्भ कर दिया तभी इनके मन में यह विचार आया कि यदि हम संगठित होकर सामूहिक विपणन बाजार चला सकें तो बेहतर लाभ होगा। इसी सोच को साकार करते हुए मित्रा के सहयोग से, फूल उत्पादकों ने वृन्दावन पुष्प उत्पादक संघ के नाम से एक औपचारिक फूल उत्पादक संघ का गठन किया।

वर्तमान में, सभी 430 फूल उत्पादन करने वाले परिवार, जो कि 21 गांवों से सम्बद्ध रखते हैं, वे सभी इस उत्पादक संघ के सदस्य हैं। इस संघ में 22 महिला सदस्य भी हैं। इसमें 15 सदस्यों की एक कार्यकारिणी समिति है, जिसके मुखिया को अध्यक्ष कहा जाता है। दैनिक कार्यों के सम्पादन की जिम्मेदारी कार्यकारिणी समिति के सभी सदस्यों के बीच विभाजित है। जिम्मेदारियों का बंटवारा चक्रीय आधार पर होता है। हो रहे प्रगति को जानने एवं आगामी कार्य की रणनीति निर्धारण हेतु कार्यकारिणी समिति फूल उत्पादकों की माह में एक बार बैठक आयोजित करती है। इसी बैठक में टोले के आधार पर फूलों की तुड़ाई कर उनके एकत्रीकरण की योजना बनाई जाती है। इनके बीच आय–व्यय को लेकर पारदर्शिता अपनाई गयी है। कार्यों के सुगमतापूर्वक संचालन हेतु संघ की कुछ औपचारिकताएं भी पूरी की गयीं।

कुछ बुरे अनुभव, जिनसे सीख मिली

- एक बार जब दादर बाजार में फूल पहुंचा तो पता चला कि एक राजनीतिक दल के आह्वान पर आज पूरा बाजार बन्द है। ऐसी स्थिति में कच्चा माल होने के कारण पूरा माल फेंक देना पड़ा। इस घटना से सीख लेकर अब बाजार का प्रतिदिन का हाल–चाल लिया जाने लगा। यदि किसी दिन किसी कारणवश बाजार बन्द हो गया तो फूलों की तुड़ाई अगले दिन की जाती है।
- फूलों को बाजार तक राज्य परिवहन निगम की बसों से ले जाया जाता है। फूलों को बस की छत पर रख दिया जाता है, जहां सूर्य की धूप व तेज हवा के कारण फूल खराब हो जाते थे। इससे उत्पाद को बस के अन्दर रखने की बात की जाती थी, लेकिन कुछ कण्डक्टर उत्पाद को बस के अन्दर रखने से मना कर देते थे। तब परियोजना के कार्यकर्त्ता राज्य परिवहन निगम के डिपो मैनेजर से विक्रमगढ़ में मिले और उनसे इस पहल हेतु अनुरोध किया। संघ की गठन तिथि की वर्षगांठ मनाये जाने के अवसर पर डिपो मैनेजर को मुख्य अतिथि के तौर पर आमन्त्रित भी किया गया। जहां पर किसानों ने उनके सामने अपनी कठिनाई रखी, जिसके सापेक्ष डिपो मैनेजर ने सामान को बस के अन्दर रखने की अनुमति दे दी।

सामूहिक विपणन प्रबन्धन

यह पाया गया कि दादर बाजार जो कि यहां से 130 किमी0 दूर है, वहां फूलों का अच्छा मूल्य भी मिलेगा और वहां के व्यवसायी भी अधिक विश्वसनीय हैं। अतः विपणन की प्रक्रिया को जानने के लिए दादर बाजार का भ्रमण किया गया। सारी प्रक्रिया जानने के बाद सितम्बर, 2007 में दादर बाजार में फूलों के सामूहिक विपणन का कार्य आरम्भ किया गया। फूल उत्पादन के कार्य में लगे सभी परिवारों के सदस्यों द्वारा फूलों की तुड़ाई का कार्य बहुत प्रातः लगभग 5 बजे से प्रारम्भ होकर लगभग 7 बजे प्रातः तक पूर्ण हो जाता है। तोड़े गये सभी फूलों को गांव में ही एक स्थान पर एकत्रित किया जाता है। फूल उत्पादक सभी सदस्यों के फूलों की तौल की जाती है और फिर उनको जूट के बोरे में सावधानी से रखा जाता है।

तत्पश्चात् विक्रमगढ़ बस स्टेशन पर विभिन्न गांवों से एकत्र किये गये उत्पादों को रखा जाता है जहां से बस या ट्रेन के माध्यम से इन्हें दादर के बाजार में भेजा जाता है। उत्पादक संघ के एक या दो सदस्य सामान के साथ बाजार तक जाते हैं ताकि सामान की देख–भाल होती रहे और सामान कम से कम खराब हो। उन्हें संघ की तरफ से 200 रू0 प्रतिदिन का मानदेय दिया जाता है। फूलों की आपूर्ति थोक विक्रेता के यहां की जाती है। ले जाने व आने का भाड़ा वृन्दावन पुष्प उत्पादक संघ द्वारा वहन किया जाता है।

मांग व आपूर्ति के आधार पर बाजार में फूलों के मूल्य में दिन–प्रतिदिन उतार–चढ़ाव आता रहता है। व्यवसायी संघ को उत्पादों का भुगतान तो मासिक आधार पर करते हैं, लेकिन वह भुगतान प्रतिदिन के मूल्य पर ही आधारित होता है। संघ का अपना एक बैंक खाता भी विक्रमगढ़ में है जिसमें व्यापारियों से प्राप्त नगद भुगतान को जमा किया जाता है। संघ का सचिव आय–व्यय का लेखा–जोखा रखता है और उत्पादकों को उनका भुगतान प्रति किग्रा0 की दर से करता है। भुगतान मासिक आधार पर मासिक बैठक में किया जाता है, जहां पर कार्यकारिणी के सभी सदस्य उपस्थित होते हैं। प्रारम्भ में, मित्रा ने भुगतान करने और लेखा–जोखा रखने में महत्वपूर्ण व सक्रिय भूमिका निभाई, लेकिन बाद में उसने धीरे–धीरे अपने को इस प्रक्रिया से अलग कर लिया और अब यह पूरी जिम्मेदारी संघ के उपर है।

संघ का प्रत्येक सदस्य बेचे गये फूल से प्राप्त मूल्य में से 10 रू0 प्रति किग्रा0 संघ के स्थाई कोष में अंशदान देता है। इस कोष का उपयोग खेती हेतु लागत खरीदने में किया जाता है, जो सदस्यों को उचित मूल्य पर उपलब्ध कराया जाता है। जब यह प्रक्रिया छोटे स्तर पर थी, निवेश की आवश्यकता कोई कठिन कार्य नहीं था और न ही आर्थिक संस्थान अनुदान के लिए कोई जुगत अपनाते थे में उपलब्ध अनुदान से कुछ परिवारों को सहायता प्रदान की गई। इसके अतिरिक्त, आज सभी सदस्यों ने संघ में फूलों के प्रति किग्रा पर रू0 10 बचत किया है, जो इनकी व्यक्तिगत बचत है। वर्ष 2007 से लेकर अब तक लगभग 79 मिलियन टन चमेली के फूलों की बिक्री दादर बाजार में करके 1.31 करोड़ रूपये की कमाई हो चुकी है, जो निम्नवत् तालिका से प्रदर्शित है।

तालिका 1 : उत्पादन का बढ़ता क्रम

वर्ष	फूल (मीट्रिक टन)	दर प्रति किग्रा (रू०)	शुद्ध आय (लाख में)
2007–08(सित०–मार्च)	1.3	111	1.9
2008–09	7.5	141	10.2
2009–10	11.3	139	15.4
2010–11	22.3	201	39.8
2011–12	36.9	196	63.8
कुल	**79.4**	**158**	**131.1**

चित्र 1 : फूलों की आपूर्ति श्रृंखला

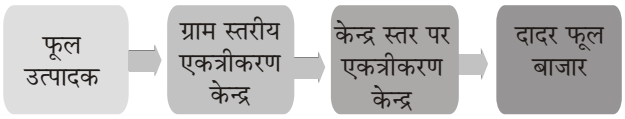

निष्कर्ष

फूलों की खेती से प्राप्त आय अतिरिक्त है और किसान परिवार इस आय का उपयोग जलस्रोत संसाधनों को उन्नत बनाने तथा सम्पत्ति अर्जन में करते हैं। इस गतिविधि से प्राप्त आय के कारण किसानों की आय अर्जन जैसे– खेती, पशुधन, श्रम आदि में विविधता आयी है जिससे उनका स्थाईत्व बेहतर सुनिश्चित हुआ है।

फूलों की खेती में लगे परिवारों के रहन–सहन का स्तर भी उन्नत हुआ है, उनकी सामाजिक व आर्थिक स्थिति में बदलाव दिख रहा है खासकर महिलाओं के संदर्भ में यह बदलाव सार्थक रूप से परिलक्षित हो रहा है, जहाँ निर्णय व नियंत्रण पर उनकी पहुँच बढ़ने के साथ संसाधनों पर उनका स्वामित्व भी बढ़ा है और यह सब कुछ उत्पादों के एकत्रीकरण व सामूहिक विपणन से ही सम्भव हो सका है।

स्वयं सेवी संस्था अब वहां पर काम नहीं कर रही है, लेकिन संघ अभी भी बेहतर ढंग से काम कर रहा है। प्रारम्भिक स्तर पर, जबकि आदिवासी किसानों का आत्मविश्वास स्तर बहुत ही कम था, उन्हें बाहरी सहायता दी गयी थी, लेकिन अब ये आदिवासी परिवार आत्मविश्वास से लबरेज़ अपने संघ का संचालन व सामूहिक विपणन का काम बखूबी कर रहे हैं। मित्रा ने विक्रमगढ़ में इस बदलाव को धीरे–धीरे किया है।

आभार

हम इस कार्य में बी0बी0 भोंसले, सुनील गुझ और पौलुस पारिध के बेहतर सहयोग के लिए उनका आभार व्यक्त करते हैं।

■

के०डी० अन्धाले
अतिरिक्त मुद्दा आधारित कार्यकारी
ईमेल : kailasanddhale @gmail.com

एस०एम० वागले
अतिरिक्त मुख्यपरियोजना समन्वयक
ईमेल : smwagle@gmail.com

ग्रामीण क्षेत्रों के लिए तकनीकी हस्तान्तरण का महाराष्ट्र संस्थान (मित्रा)
बायफ– मित्रा भवन, निवास भवन के विपरीत
बोधाले नगर के पीछे, नासिक– पूना सड़क
नासिक– 422 021
महाराष्ट्र

Farmer Organisations
LEISA INDIA, Vol. 14, No.3, Pg. # 6-8, September 2012

चूसक कीटों को आकृष्ट करने के लिए पीले रंग का ट्रेप लगाती महिलाएं

मित्र या शत्रु कीटों का अभ्यास द्वारा निर्धारण

जे० कृष्णन्

अधिकांशतः खेती के तरीकों पर ही कीट व्यवहार निर्भर करता है। पौधे और कीड़े दोनों परस्पर एक– दूसरे पर निर्भर करते हैं। एक तरफ पौधे कीड़ों को जहां भोजन उपलब्ध कराते हैं, वहीं पौधों को आवश्यक पारिस्थितिकी सेवाएं प्रदान करने के सन्दर्भ में कीड़े महत्वपूर्ण होते हैं। इसीलिए किसानों की दृष्टि से फसल प्रबन्धन एक बड़े पारिस्थितिकी तंत्र प्रबन्धन का एक भाग है। एक पारिस्थितिकी तंत्र के अन्तर्गत आने वाले विभिन्न जीवों के आपसी सम्बन्ध की गहरी समझ होनी आवश्यक है।

एक विशिष्ट पारिस्थितिकी तंत्र की प्राकृतिक चक्र एवं खाद्य श्रृंखला के आन्तरिक भाग के रूप में तथा पारिस्थितिकी तंत्र की उत्पादकता बढ़ाने के लिए किसी भी पारिस्थितिकी तंत्र में जैव विविधता महत्वपूर्ण है। एक पारिस्थितिकी तंत्र में, प्रत्येक छोटी से छोटी प्रजाति अपनी एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। फसल पारिस्थितिकी भी एक ऐसी पारिस्थितिकी है, जिसकी उत्तरजीवितता खेत की जैविक प्रजातियों जैसे केंचुआ, उभयचरों, रेंगने वाले कीड़ों, कीट–पतंगों, चिड़ियों आदि की जैव विविधता पर होती है। भोजन तंत्र में उनकी अन्योन्याश्रितता व अन्तनिर्भरता पर समझ विकसित करते हुए बेहतर फसल उत्पादन के लिए उनकी भूमिका व उनके लाभ पर बेहतर समझ बना सकते हैं।

एक फसल पारिस्थितिकी तंत्र में कीड़ों की भूमिका पर समझ की कमी होने के कारण, हम उन्हें नुकसानदायक कीटों में बदलते देख रहे हैं। यदि यह कहें कि सभी समय ये कीट जीवन के अन्य रूपों के लिए हानिकारक हैं और हमारे सभी संसाधनों के नष्ट होने का कारक बन रहे हैं तो अतिश्योक्ति न होगी। बहुत बार, कदाचित् हम उन

> **''बहुधा कीड़े एक ''समस्या'' के रूप में नहीं वरन् एक गंभीर समस्या जैसे पोषक तत्वों के अभाव में 'लक्षण' के रूप में दिखते हैं। जब मृदा व पौध दोनों में पोषण की कमी होती है, तो कीट अधिक तेजी से आक्रमण करते हैं।''**

कीटों को बदलने में सफल होते हैं, जो पौधों में एक गम्भीर कीट के रूप में आक्रमण कर देते हैं। उदाहरण के लिए, वर्ष 2007 में काटन मिली बग को एक गम्भीर कीट के रूप में चिन्हित किया गया, जिसने दक्षिण भारत में न केवल कपास पर, वरन् बहुत सी दूसरी फसलों जैसे साबूदाना, पपीता, सजावटी पौधों आदि पर भी हमला किया। यहां प्रश्न यह है कि, कैसे एक ऐसा कीड़ा, जिसे पिछले वर्षों में नहीं देखा गया था, वह अचानक एक गम्भीर कीट में बदल गया है। क्योंकि काटन मिली बग को कपास के लिए कभी भी एक गम्भीर कीट नहीं माना गया था। इसके लिए हमारी पारिवारिक कृषिगत गतिविधियां भी प्रमुख कारण रही होगीं।

बहुधा, कीड़े एक समस्या के रूप में नहीं हमला करते, बल्कि वे एक

तालिका 1 : गैर रासायनिक विधि से चूषक कीटों व मोथा का नियंत्रण/पकड़ना

गाँव	फेरामोन ट्रेप्स (15 नं०)		पीली छड़ीदार टैप्स (50 नं०)		
ब्री अग्ररम	843	15	680	414	56
गोवारिसेट्टीपेट्टी	220	9	592	212	98
काट्यूनायक नहाल्ली	360	17	641	203	114
रंगपुरम्	362	4	318	154	47
गेरमालामपट्टी	228	11	409	183	37
	2013	56	2440	1166	352

गम्भीर समस्या जैसे – पोषक तत्वों के अभाव के लक्षण के रूप में प्रदर्शित होते हैं। जब पोषण की दृष्टि से मृदा व पौधे दोनों कमजोर होते हैं, तो उन पर कीटों का हमला तेजी से होता है। इसी प्रकार, जलवायु में होने वाले अन्तर/परिवर्तन भी कीड़ों और उनकी क्रियाओं की घटना को प्रभावित करते हैं। अतः यह आवश्यक है कि, अलग से कीटों के आक्रमण को देखने की बजाय फसल स्वास्थ्य को समग्र रूप में देखा जाये। कीड़ों की व्यवहारात्मक भूमिका का निर्धारण बहुत हद तक कृषिगत प्रथाओं पर निर्भर करता है। स्पष्टतया हमने पाया है कि जिन खेतों में टिकाऊ खेती पद्धति का प्रयोग किया जाता है, उन खेतों में कीटों का आक्रमण न्यून होता है, जबकि उच्च बाहरी निवेश का प्रयोग करने वाले खेतों में इन कीटों का आक्रमण अधिक होता है। इसलिए किसानों द्वारा एक बड़े पारिस्थितिकी तंत्र के एक भाग के तौर पर फसल प्रबन्धन किया जाना आवश्यक है। अतः एक पारिस्थितिकी तंत्र के अन्तर्गत विभिन्न जीव स्वरूपों के सम्बन्धों पर गहरी समझ होनी आवश्यक है।

खेत से सीखना

वैकल्पिक आजीविका की तलाश में पुरूष वर्ग के सुदूर शहरों में पलायन के कारण धर्मपुरी तालुक के पेन्नाग्राम में महिला प्रधान परिवारों की संख्या बढ़ती जा रही है। खेती पर जानकारी एवं उससे सम्बन्धित संसाधनों तक पहुंच न होने के अभाव में, महिलाएं अपनी खेती को अपने पुरखों से मिली जानकारियों एवं परिवार में की जाने वाली खेती को देखकर ही खेती का प्रबन्धन कर रही हैं। इसके आलोक में, ए0एम0ई0 फाउण्डेशन ने इस मुद्दे को पहचान कर उससे सम्बन्धित कार्य करने प्रारम्भ किये। उसने पारिस्थितिकी तंत्र व खेती से सम्बन्धित जानकारी बढ़ाकर उन्हें इस योग्य बनाया कि वे अपने खेत से बेहतर उपज लेने हेतु खेती से सम्बन्धित निर्णय लेने में सक्षम हो सकें। किसान विद्यालय पद्धति के माध्यम से विकासखण्ड पेन्नाग्राम के बी0 अग्रहरम, गोवरीसेटीपेट्टी, गेरमालामपट्टी, रंगपुरम व काट्टूनायकानाहाल्ली गांवों की 25 खेतिहर महिलाओं को कृषि पारिस्थितिकी तंत्र पर समझ बढ़ाते हुए प्रशिक्षित किया गया। क्षमता अभिवर्धन के साथ इनकी विश्लेषणात्मक व निर्णय लेने की क्षमता में वृद्धि करना इस किसान विद्यालय का प्रमुख केन्द्रबिन्दु था। किसानों ने स्थाई उत्पादन के लिए बाहरी निवेश पर अपनी निर्भरता कम करते हुए कम लागत की खेती तकनीकों को अपनाना प्रारम्भ कर दिया।

सीखने की इस क्रिया को बड़े पैमाने पर प्रसारित करने के उद्देश्य से, पेन्नाग्राम विकास खण्ड के 10 गांवों से स्वेच्छा से तैयार 25 महिलाओं का एक समूह गठित किया गया। इन महिलाओं को खेती के पारिस्थितिकी प्रबन्धन पर 15 दिनों का प्रशिक्षण दिया गया, जिसमें सुगमीकरण की विधि पर भी इनकी क्षमता अभिवृद्धि की

पूरे विश्व स्तर पर लीजा को एक मान्यता प्राप्त कृषि आधारित कृषि पारिस्थितिकी सिद्धान्त माना गया है। पारिस्थितिकी खेती ने विश्व स्तर पर लोगों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया है जो प्रारम्भतया प्राकृतिक तत्वों की देख-रेख व पोषण, उनके सम्बन्धों व स्वस्थ संतुलन के सम्पूर्ण सिद्धान्तों पर आधारित है।

इसका अर्थ यह है कि पर्यावरण सम्मत विकल्पों के माध्यम से प्राकृतिक संसाधनों व फसल चक्र प्रणाली का बेहतर प्रबन्धन करना ताकि हम पर्यावरणीय दृष्टि से सुरक्षित हो, बेहतर पौध विकास हो सके। परिणामतः बेहतर उपज मिले व शुद्ध लाभ बढ़े। बहुधा, सामान्यतः पर्यावरण सम्मत विकल्प स्थानीय अनुकूलनों में निहित होते हैं जो कि स्वयं स्थानीय किसानों द्वारा सरलता से अपनाये जाते हैं।

गयी। तत्पश्चात् इनके गांवों में एक–एक किसान विद्यालय स्थापित किया गया, जो इनकी देख–रेख में संचालित किये जाते हैं। पुनः ये प्रत्येक प्रशिक्षित महिला 5 गांवों में किसान विद्यालयों का संचालन करती है, जिसमें 100 महिलाओं का जुड़ाव होता है। प्रारम्भ में, ये महिलाएं जो स्वयं सहायता समूहों की सदस्य थीं और केवल बचत व ऋण की गतिविधि से ही जुड़ी हुई थीं। उनके लिए किसान विद्यालय का विचार बहुत ही उत्साहित करने वाला था, क्योंकि इसके माध्यम से महिलाएं बेहतर खेती पद्धति को सीख कर अपनी आजीविका स्थाईत्व की दिशा में सफल हो सकती थीं।

किसान विद्यालय इन महिलाओं को एक ऐसा मंच प्रदान करता था, जहां ये साप्ताहिक रूप से मिलकर उच्च लागत खेती की समस्याओं को आपस में बांट सकती थीं, उन पर चर्चा कर सकती थीं। इन महिलाओं ने घर की अन्य जिम्मेदारियों को ध्यान में रखते हुए किसान विद्यालय संचालन का समय प्रातः 8–10 बजे तक का निर्धारित किया। ये किसान विद्यालय जुलाई, 2011 से लेकर जनवरी 2012 तक 6 माह तक चले, जहां पर इससे जुड़ी सदस्यों ने भूमि की तैयारी से लेकर फसल कटाई तक पारिस्थितिकी कृषि प्रबन्धन से जुड़े विभिन्न पहलुओं पर अपनी समझ बनाई। पांच किसान विद्यालयों में से, दो मूंगफली की खेती पर केन्द्रित थे, जबकि शेष तीन कपास की खेती के साथ सभी सूखी जमीन पर उत्पादन तंत्र माध्यम पर केन्द्रित रहे। सभी किसान विद्यालयों में, कीटों,

ट्रैप पर चिपके चूसक कीटों को दिखाती महिला समूह

पत्ती काटने का प्रयोग

चिड़ियों, खेती पर अल्पकालिक व दीर्घकालिक प्रयोगों के साथ जैविक विधि से कीट नियन्त्रण, जैविक खाद बनाने, फसल पद्धति, मृदा व जल संरक्षण आदि गतिविधियों पर समान रूप से चर्चा की गयी। सभी किसान विद्यालयों में महिलाओं की सहभागिता बड़े पैमाने पर रही।

कीटों पर समझ बनाना

किसान विद्यालयों पर चलने वाले सत्रों ने टिकाऊ सामूहिक सीख प्रक्रिया को प्रोत्साहित किया। युवा महिलाओं ने कीट प्रबन्धन से जुड़े बहुत से पहलुओं जैसे– कीड़ों की क्रियात्मक भूमिका, उनकी व्यवहारिक पद्धति और फसल उत्पादन के लिए पारिस्थितिकी तंत्र की सेवाओं पर अपनी सीख बनाई। नव प्रयोगात्मक अध्ययनों जैसे कीड़ों का अजायबघर भी बनाया गया। निरीक्षण के उद्देश्य से, एक वर्ग मीटर की परिधि में खेत को चिन्हित किया गया। नजदीक से एवं निरन्तर निरीक्षण के लिए मूंगफली के पौधों को लगाया गया और उन्हें व्यवस्थित भी किया गया। एक वर्ग मीटर में लगी मूंगफली की फसल के निरीक्षण के दौरान सदस्यों ने पाया कि ''एफिड'' नामक कीट का प्रकोप सिंचाई की परिस्थिति में अधिक हुआ है। उन्होंने समझ लिया कि सिंचित परिस्थितियों में नाइट्रोजन अधिक तेजी से काम करता है और तब एफिड का प्रकोप अधिक होता है। दूसरी तरफ सूखा परिस्थितियों में जब उर्वरक का प्रयोग नहीं किया गया तो एफिड का प्रकोप बहुत ही कम हुआ। कपास आधारित खेती पद्धति में मित्र कीट बहुतायत में पाये जाते हैं। सामान्यतः कपास का उत्पादन व्यापारिक दृष्टिकोण से उच्च बाहरी निवेश लगाकर किया जाता है। इस कारण इसमें अधिक मात्रा में कीड़े पाये जाते हैं और उनका आक्रमण भी उच्च स्तर पर होता है। लेकिन, यहां यह ध्यान देना भी उतना ही महत्वपूर्ण है कि बहुत से कीड़े कपास की फसल को नुकसान पहुँचाने वाले कीटों पर हिंसक तरीके की भूमिका निभाते हैं।

कुछ कीड़े जैसे सिरफिड मक्खी, ग्रीन लेस विंग, लेडी बर्ड बीटल आदि कपास उत्पादन के लिए वातावरण तैयार करने में एक बहुत प्रभावी व लाभकारी भूमिका निभाते हैं। वे कीटों जैसे एफिड, सफेद मक्खी, जैसिड्स, मिलीबग आदि को चूसकर उनका शिकार करते हैं और फसलों को सुरक्षा प्रदान करते हैं। सामान्यतः ये मित्र कीट बहुत विषकारी, तेजी से उड़ने वाले, तीव्र गति करने में सक्षम तथा धीमे–धीमे गति करनेवाले कीड़ों जैसे एफिड अथवा एक ही जगह पर स्थिर रहने वाले कीड़े जैसे मिली बग आदि का चूसकर शिकार करने वाले होते हैं। किसान विद्यालय पर किये गये इस तरह के एक प्रयोग ने कीटों व हिंसक कीटों के बीच आपसी अन्तर्सम्बन्ध पर महिलाओं की समझ विकसित करने में सहायता की। मूंगफली की फसल को एक जाल से ढंक कर उगाया गया। जाल के बगल में एफिड व लेडी वग बीटल को छोड़ दिया गया। प्रतिभागियों ने देखा कि लेडी बग बीटल ने बहुत तेजी से एफिड के पेट में छेद कर दिया और उसके अन्दर का रस चूसने लगी। धीरे–धीरे उसने पूरे कीड़े को खा लिया।

महिलाओं को इस बिन्दु पर भी शिक्षित किया गया कि किस प्रकार फसल की वृद्धि के लिए प्रत्येक कीट नुकसानदायक नहीं होते। इस हेतु कपास के खेत में पत्तियों को काट कर रखा गया। वानस्पति अवस्था के दौरान चयनित पंक्तियों में से कपास के पौधों की पत्तियों में से क्रमशः 50 प्रतिशत, 75 प्रतिशत, 100 प्रतिशत व 0 प्रतिशत पत्तियां हटा ली गयीं। सदस्यों से यह कहा गया कि वे देखते रहें और कटाई तक की वृद्धि का रिकार्ड रखें। प्रतिभागियों ने देखा कि सभी पौधें जिनकी पत्तियां काट दी गयीं थीं, उनकी पुनः नयी पत्तियां उग आयीं। जिन पौधों की पत्तियां काट दी गयी थीं और जिनकी पत्तियां नहीं काटी गयीं थी, उन दोनों पौधों के उत्पादन मानकों जैसे –प्रति पौधे फूलों व फलों की संख्या में कोई अन्तर नहीं पाया गया। उन्होंने सीखा कि पौधों के अन्दर यह जन्मजात क्षमता होती है कि यदि उनकी पत्तियां काट दी जाये तो वे पुनः नयी पत्तियां उगाकर अपनी कमी को पूरा कर लेती हैं। इस पूरे प्रयोग के बाद सदस्यों ने यह निष्कर्ष निकाला कि कीटों को देखते ही हमेशा उन पर कीटनाशकों का छिड़काव करना कोई जरूरी नहीं होता है।

सदस्यों ने यह भी सीखा कि कीटों के आक्रमण के कारण यदि फसल नुकसान होने की स्थिति भी आ जाये तो जैविक विधि से उनका प्रबन्धन किया जा सकता है। उन्होंने स्थानीय स्तर पर नव पहल करते हुए चिपचिपा जाल, फेरोमोन जाल तैयार किया और खेत स्तर पर अनुकूल सूक्ष्म जलवायुविक परिस्थितियां निर्मित कीं। विभिन्न रंगों के जाल को अपनाने के दौरान इन्होंने पाया कि पीला रंग कीड़ों जैसे एफिड, जैसिड्स, सफेद मक्खी आदि को अपनी ओर अधिकतम संख्या में आकर्षित करता है।

भावी रणनीति

कृषिगत गतिविधियां बहुत हद तक कीड़ों की भूमिका को निर्धारित करती हैं। पौधे व कीड़े दोनों आपस में एक–दूसरे पर निर्भर करते हैं। पौधे जहां कीड़ों को भोजन प्रदान करते हैं, वहीं कीड़े पौधों को पर्याप्त विकास करने के लिए आवश्यक पारिस्थितिकी सेवाएं उपलब्ध कराते हैं। इस एक मजबूत विश्वास कि ''केवल कीड़े पैदा होते हैं, नुकसानदायक कीट नहीं'' के साथ ये युवा महिलाएं पूरे आत्म विश्वास के साथ अपने खेतों में टिकाउ खेती पद्धति अपनाने के लिए तत्पर हैं। साथ ही ये महिलाएं अपनी पारिस्थितिकी की यात्रा को दूर तक ले जाने के लिए कटिबद्ध हैं।

■

जे० कृष्णन्
एफ०ए०ओ० से प्रशिक्षित किसान विद्यालय सुगमीकर्ता
नं० 257/ 27, भारती नगर, पोस्ट– चिन्नाथिरूपति
सालेम– 636 008
ईमेल : josephkrish@rediffmail.com

Insects as Allies
LEISA INDIA, Vol. 14, No.1, Pg. # 17-19, March 2012

जलवायु परिवर्तन के साथ मुकाबला

सुमन सहाय

वैश्विक उष्मीकरण व जलवायु परिवर्तन के कारण खाद्य, जल व स्वास्थ्य सुरक्षा सर्वाधिक प्रभावित होगी और इसके संयुक्त व अलग–अलग दोनों प्रभाव दिखेगें। विकासशील देशों में उष्ण कटिबंधीय व उप उष्णकटिबंधीय दोनों क्षेत्रों में सबसे खराब स्थिति होने की संभावना हैं। ऐसी स्थिति में यह आवश्यक है कि हम बिना समय बरबाद किये खाद्य व जल सुरक्षा के लिए जलवायु लचीले तंत्रों को विकसित करने व उनको क्रियान्वित करने की प्रक्रिया आरम्भ कर दें।

जलवायुविक भविष्यवाणियों के अनुसार, विकासशील देशों में शीतोष्ण देशों की तुलना में उष्णकटिबन्धीय देश जलवायु परिवर्तन से होने वाले नुकसान के प्रति अधिक संवेदनशील होते हैं। अफ्रीका व दक्षिणी एशिया की कृषि के उत्पादक क्षेत्र बहुत बुरी तरीके से प्रभावित होगें। कुछ अनुमानों के अनुसार कुछ विकासशील देशों में कृषि के अन्तर्गत उत्पादक क्षमता में 40 प्रतिशत तक की कमी आ सकती है। वर्षा पद्धति और तापमान के स्वरूप में परिवर्तन से स्थानीय जल संतुलन प्रभावित होगा और कुछ निश्चित फसलों की खेती के लिए यथोचित मौसम न मिलने से परेशानी होगी जिससे खाद्य कृषिगत उत्पाद नियंत्रण से बाहर हो जायेगें। सबसे अधिक परेशानी तो सूखा क्षेत्र में निवास करने वाले छोटी जोत के किसानों को होगी, जहां पर खेती वर्षा आधारित होती है। बहुफसली क्षेत्रों में नुकसान होने की वजह से खाद्य उत्पादन में अपेक्षाकृत कमी आना दक्षिणी एशिया के लिए एक बड़ा झटका साबित हो सकता है। ऐसे क्षेत्र जहां पर दो से तीन फसलें ली जा रही हैं, उनके सबसे अधिक प्रभावित होने की संभावना व्यक्त की जा रही है और इन नुकसानों की भरपाई के लिए आज एक फसली क्षेत्रों को दो फसली क्षेत्रों में बदलने की व्यापक आवश्यकता है और इस दिशा में प्रयास किया जाना चाहिए। यह कार्य सबसे पहले और प्राथमिकता के आधार पर कुशल जल संचयन व न्यायसंगत प्रबन्धन के द्वारा किया जा सकता है।

कृषि पर जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से मुकाबला करने के लिए संसाधनों जैसे– मृदा, जल और जैव विविधता का प्रबन्धन सावधानी से करने की आवश्यकता है। सतत् खेती तभी संभव है, जब प्राकृतिक संसाधनों को बिना कोई नुकसान पहुंचाये पर्यावरणीय वस्तुओं एवं सेवाओं का प्रयोग प्रभावी ढंग से किया जाये। यदि विकासात्मक कार्यक्रमों में जलवायु परिवर्तन प्रभावों को सही दिशा में जोड़ते हुए उसे क्रियान्वित किया जाये तो यह नाजुकता को कम करते हुए खाद्य उत्पादन में स्थाईत्व तथा आजीविका सुरक्षा में बेहतरी ला सकता है। तेजी से बदलते मौसम की मार झेलते, खेती में होने वाले नुकसान से घबराये किसानों को अनुकूलन के लिए तैयार करने हेतु बड़े पैमाने पर जलवायु साक्षरता कार्यक्रम आवश्यक है, क्योंकि उनकी पारम्परिक जानकारियां उन्हें इस परिवर्तन से ताल–मेल बिठाये रखने में सक्षम नहीं हो पा रही हैं।

विकासशील देशों में अनाज उत्पादन क्षमता में काफी कमी का सामना करना पड़ेगा। भारत में, यदि तापमान में 2 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि हुई तो सामान्यतः चावल के उत्पादन में प्रति हेक्टेयर एक टन की कमी दर्ज की जा सकती है। वर्ष 2050 तक गर्मी में वृद्धि वाले क्षेत्रों के बढ़ने की वजह से लगभग आधे भारत की प्रमुख फसल गेंहूं का फसली क्षेत्र कम होगा, नतीजतन उत्पादकता प्रभावित होगी। औसत तापमान में प्रत्येक 1 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि होने से, भारत में गेंहू का उत्पादन प्रतिवर्ष लगभग 7 मिलियन टन घटेगा, रूपये में देखें तो वर्तमान मूल्य के अनुसार प्रतिवर्ष लगभग 1.5 बिलियन डॉलर का नुकसान उठाना पड़ेगा।

विभिन्न स्तरों पर पहल की आवश्यकता

खेती व खाद्य उत्पादन पर जलवायु परिवर्तन के पड़ने वाले प्रभावों का सामना करने के लिए भारत को वैश्विक, क्षेत्रीय, राष्ट्रीय व स्थानीय स्तरों पर समानान्तर प्रयास करने की आवश्यकता होगी –

वैश्विक : वैश्विक स्तर पर भारत को इस बात पर कड़ाई से चर्चा करनी चाहिए कि विकसित देश ऊर्जा उत्सर्जन घटाने के अपने वादे पर अमल करें ताकि वैश्विक तापमान 2 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ने की स्थिति में ऊर्जा उत्सर्जन में 50 प्रतिशत तक कमी की संभावना बने। यदि ऐसा नहीं हुआ तो, विकासशील देशों में कृषि व खाद्य सुरक्षा पर भयावह प्रभाव परिलक्षित होगा। तापमान वृद्धि से अत्यधिक ठंडे क्षेत्र लाभान्वित होगें, क्योंकि ये उष्मीय स्थितियां उनके एक फसली क्षेत्र को दो अथवा तीन फसली क्षेत्र में बदलने के अनुकूल परिस्थितियां प्रदान करेंगी। ध्यान देने योग्य है कि विकासशील विश्व में कृषि लोगों के जीवन का आधार है और उन्हें जलवायु परिवर्तन के कारण बुरी स्थितियों का सामना करना पड़ेगा। भारत को विकसित देशों से इस बात का आग्रह करना चाहिए कि वे प्रदूषण बढ़ाने वाले अन्य साधनों में भी कमी लायें, जिससे कि अनुकूलन की दिशा में अग्रसर हुआ जा सके।

क्षेत्रीय : हिमालयन पारिस्थितिकी तंत्र को सुरक्षित रखने तथा ग्लेशियर पिघलाव में कमी लाने के लिए दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय

सहयोग संघ के स्तर पर क्षेत्रीय ताल–मेल बिठाने की आवश्यकता है। तिब्बती पठार से निकलने वाली नदियों एवं उनके जल पर त्वरित वार्ता करने की आवश्यकता है ताकि गंगा और ब्रम्हपुत्र जैसी मुख्य नदियों के बहने वाले जल को कृषि के लिए सहायक बनाने हेतु प्रबन्धित किया जा सके। समान कृषिगत परिस्थिति वाले क्षेत्रों में जलवायु परिवर्तन के प्रभाव न्यूनीकरण व उससे अनुकूलन हेतु क्षेत्रीय रणनीतियां उनकी कृषि व खाद्य उत्पादन को सुरक्षा प्रदान करेंगी।

राष्ट्रीय : लम्बे समय से अनुकूलन रणनीति पर काम चल रहा है और अब उसे लागू करने की आवश्यकता है। न्यूनीकरण व अनुकूलन क्रियाओं के लिए यथोचित नीतियों एवं आवश्यक वित्तीय सहयोग की आवश्यकता है। जोखिम को कम करने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में खाद्य व आजीविका के बहु विकल्पों हेतु रणनीति बनाना समय की मांग है। इन रणनीतियों में खाद्य मुद्रास्फीति को हर कीमत पर जोड़ा जाना चाहिए। जलवायु परिवर्तन की वजह से अधिक लगातार एवं अप्रत्याशित सूखा व बाढ़ की स्थितियां बनेंगी, परिणामतः खाद्य उत्पादन में और अधिक कमी आयेगी। वर्ष 2009 में मात्र एक बार खराब मानसून की स्थिति बनने की वजह से चावल की उपज में 15 मिलियन टन तथा दालों के उत्पादन में 4 मिलियन टन की कमी आयी और इन वस्तुओं के दाम आसमान पर पहुंच गये। फसलों, पशुधन, मछलियों, मृदा आदि पर वैश्विक तापमान के प्रभावों को जानने तथा उसका सामना करने हेतु समाधान की रणनीति बनाने के लिए अच्छे वित्तीय सहयोग के साथ रणनीतिक शोध के लिए सावधानीपूर्वक नियोजन की आवश्यकता है। न्यूनीकरण व अनुकूलन रणनीति के लिए नवीनीकृत ऊर्जा एक आवश्यक अंग होना चाहिए और हमें इसे मुख्य धारा में शामिल करने हेतु केन्द्रित होना चाहिए।

स्थानीय : न्यूनीकरण व अनुकूलन दोनों हेतु वास्तव में स्थानीय स्तर पर ही काम करना होगा। जलवायु परिवर्तन के न्यूनीकरण हेतु स्थानीय स्तर पर स्थाई कृषि विकास की खोज करना एक अभिन्न अंग है और जलवायु परिवर्तन से मुकाबला करना स्थाई कृषि के लिए महत्वपूर्ण है। कृषि को टिकाउ बनाने तथा खाद्य व पोषण के नुकसान को कम करने के लिए, कृषि पारिस्थितिकी इकाई के लिए स्थानीय परिवेश के अनुसार तकनीक विकसित करने की आवश्यकता होगी। कृषि से होने वाले उत्सर्जन को कम करके किसानों की कृषि में निवेश को कम किया जा सकेगा और इससे उत्पादन तंत्र भी अधिक स्थाई होगा। यद्यपि कि देश की भावी कृषि के लिए त्वरित व लक्षित अनुकूलन रणनीतियां बनाना असली चुनौती है। ग्रामीण व कृषक समुदाय की नाजुकता को कम करने, लचीलापन को सशक्त बनाने तथा अनुकूलन क्षमता निर्माण के लिए अनुकूलन रणनीति बनाने की आवश्यकता होगी। औद्योगिक कृषि पारिस्थितिकी तंत्र पर्यावरणीय संसाधनों व उनकी सेवाओं को नुकसान पहुंचा रहे हैं, जिससे लचीलेपन की प्रक्रिया कमजोर हो रही है। जलवायु परिवर्तन की अनिश्चितताओं से निपटने हेतु कृषि उत्पादन तंत्र में स्थाईत्व विकसित करने के बजाय फसल वृद्धि, जलीय कृषि और पशुधन से मिलने वाले लाभों को बढ़ाने की बात करना कृषक समुदाय के लिए अधिक लाभप्रद सिद्ध होगा। फसल पुनचक्रीकरण, जैव कार्बनिक खाद व जैविक कीट नियंत्रण के साथ पारिस्थितिकी तंत्र माध्यम मृदा स्वास्थ्य व जल धारण क्षमता में वृद्धि कर मृदा उर्वरता को उन्नत बनाते हुए मृदा क्षरण को कम किया जा सकता है और लम्बे समय के लिए उत्पादक क्षमता बनाये रखी जा सकती है। कृषि पारिस्थिति0की तंत्र में अधिक विविधता से कीटों व सूक्ष्म जीवाश्मों का एक अधिक प्रभावशाली नेटवर्क मजबूत होता है, जो फसलों पर रोग व्याधियों को नियन्त्रित करता है। कृषि पारिस्थितिकी तंत्र व कृषक समुदाय में लचीलेपन की क्षमता का निर्माण करते हुए उनकी अनुकूलन क्षमता को उन्नत बनाया जा सकता है और ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को न्यूनीकृत करते हुए उनका मुकाबला किया जा सकता है।

खाद्य उत्पादन के लिए एक कृषि पारिस्थितिकी तंत्र के केन्द्र में कृषि जैव विविधता होती है। जैसे मृदा उर्वरता को प्रोत्साहित करना, उच्च उत्पादकता को बढ़ावा देना और फसलों, पशुधन, मत्स्य एवं मृदा संसाधनों की सुरक्षा करना आदि। फसल प्रजातियों की तरह ही पशुधन एवं मछलियों की प्रजातियों व नस्लों में भी विविधता आवश्यक है। आनुवंशिक विविधता प्रजातियों को बदलते पर्यावरण से अनुकूलन स्थापित करने तथा जैविक व अजैविक तनावों जैसे रोग–व्याधियों, सूखा व लवणता आदि परिस्थितियों का मुकाबला करने में सक्षम बनाती है।

कुछ विशिष्ट संस्तुतियाँ

दरअसल मृदा स्वास्थ्य, जल प्रबन्धन व संरक्षण तथा कीट प्रबन्धन, कृषि व खाद्य उत्पादन पर सघन ध्यान देने के अतिरिक्त जलवायु परिवर्तन के कारण उत्पन्न होने वाले उथल–पुथल से स्थाई व पारिस्थितिकी तौर पर अनुकूलन स्थापित करने की भी आवश्यकता है। इस हेतु निम्न बिन्दुओं पर ध्यान देना आवश्यक होगा :

- अनुकूलन हेतु वर्षा आधारित क्षेत्रों के लिए जोखिम न्यूनीकरण पर आधारित एक विशेष पैकेज विकसित करने की आवश्यकता होगी। फसलों, पशुधन, मत्स्यपालन, मुर्गी पालन और कृषि वानिकी आदि को शामिल करते हुए एक विविधीकृत उत्पादक प्रतिरूप तैयार करना होगा। गृहवाटिका के साथ–साथ नर्सरियों को भी प्रोत्साहित करना होगा ताकि जलवायु परिवर्तन के कारण उपज में होने वाली हानि को कम करते हुए खाद्य व पोषण सुरक्षा सुनिश्चित की जा सके। तालाब, उर्वरक वृक्षों व जैव पौधों को सभी अर्ध सूखा वर्षा आधारित क्षेत्रों में लगाने हेतु प्रोत्साहित किया जाना आवश्यक है, जो हमारे कृषि क्षेत्र का 60 प्रतिशत भाग तैयार करती है।
- अनुकूलन रणनीति विकसित करने के लिए निवेश आधारित माध्यम के बजाय ज्ञान आधारित माध्यम को अपनाया जाना चाहिए। समुदाय द्वारा आपदाओं से सामना करने की रणनीति के बारे में पारम्परिक ज्ञान को दस्तावेजित किया जाना चाहिए और जलवायु परिवर्तन की अनिश्चितताओं को समझने, लचीलापन निर्माण करने, कृषिगत अनुकूलन स्थापित करने तथा उत्सर्जन घटाने जैसी समस्याओं का समाधन ढूंढ़ने में मदद करने के लिए आयोजित प्रशिक्षण कार्यक्रमों में इन दस्तावेजों का इस्तेमाल किया जाना चाहिए।
- स्थानीय समुदाय की सहभागिता से प्राथमिकता के तौर पर फसलों और पशु नस्लों की आनुवंशिक विविधता व इससे जुड़ी जानकारियों को हासिल कर उन्हें संरक्षित करना चाहिए।
- देशी गाय–भैंसों के प्रदर्शन को उन्नत बनाने के लिए उनके नस्ल सुधार की दिशा में कार्य किये जाने चाहिए ताकि वे संकर

प्रजातियों के मुकाबले प्रतिकूल मौसम से बेहतर अनुकूलन स्थापित कर सकें। उनको दिये जाने वाले चारा मिश्रण का संतुलन बनाये रखना बहुत आवश्यक होगा क्योंकि चारे का संतुलित मिश्रण न केवल दूध का उत्पादन बढ़ाने की क्षमता रखते हैं, वरन् वे मीथेन गैसों का उत्सर्जन भी घटाते हैं। अतः इनको बड़े पैमाने पर विस्तारित करने की आवश्यकता है।

- कीट व रोग पद्धति में होने वाले परिवर्तन पर दृष्टि रखने तथा नये कीटों व रोगों के फैलने की संभावना व्यक्त करने हेतु एक पूर्व चेतावनी प्रणाली बनायी जानी चाहिए। कुल मिलाकर कीट नियंत्रण रणनीति 'समन्वित कीट प्रबन्धन' पर आधारित होनी चाहिए क्योंकि यह विभिन्न जलवायुविक परिदृश्य में बहु आयामी कीटों से सावधानी बरतने में मददगार होता है।
- स्थानीय खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने व मूल्यों में स्थिरता बनाये रखने के लिए परिवार/समुदाय स्तर से लेकर जिले स्तर से होते हुए राष्ट्र स्तर तक अनाज संग्रह या अनाज बैंक की अवधारणा को सफलीभूत किया जाना चाहिए।
- कृषि ऋण व फसल बीमा प्रणाली को छोटे किसानों हेतु अधिक व्यापक व उत्तरदायी बनाने की आवश्यकता है। उदाहरण के लिए, गरीब व वंचित परिवारों/समुदायों के लिए आमदनी का एक अच्छा स्रोत होते हुए भी सुअरों को पशुधन बीमा के अन्तर्गत शामिल नहीं किया गया है। किसानों के लिए एक विशेष जलवायु जोखिम बीमा पालिसी भी शुरू की जानी चाहिए।
- देश में सभी 128 कृषि पारिस्थितिकी मण्डल के प्रत्येक मण्डल में निम्नवत् अनुकूलन व न्यूनीकरण सहयोग ढांचा तैयार किया जाना चाहिए–
  - जलवायु जोखिम शोध, प्रबन्धन व प्रसार हेतु एक केन्द्र तैयार किया जाना चाहिए, जिसमें विभिन्न मौसम संभावनाओं को जानने व खेती प्रणाली माध्यम को प्रोत्साहित करने हेतु कम्प्यूटर से विविध प्रकार की अनुकृति मॉडल तैयार किये जा सकें। इससे कृषक समुदाय न केवल प्रतिकूल मौसमों के खराब प्रभावों को कम करने में सक्षम हो सकेगा, वरन् वह अच्छे मानसून का अधिकतम लाभ भी प्राप्त कर सकेगा। मानसून पर निर्भर वैकल्पिक फसल रणनीति तथा आपातकालीन नियोजन क्रियान्वयन क्षमता के साथ समुदाय आधारित बीज बैंक का एक नेटवर्क तैयार किया जाना चाहिए।
  - मृदा स्वास्थ्य निर्माण, एकीकृत कीट प्रबन्धन, जल संरक्षण और इसके यथोचित एवं प्रभावी प्रयोग पर प्रशिक्षण कार्यक्रमों तथा घरों में रोजमर्रा के जीवन में होने वाले शोधों एवं अनुभवों को समाहित करते हुए एक किसान विद्यालय चलाया जाना चाहिए। किसान विद्यालयों में पौधों व पशु प्रजनन को भी शामिल किया जाना चाहिए। इसके साथ ही क्षेत्र की कृषि जैव विविधता में उपलब्ध मूल्यवान आनुवांशिक लक्षणों जैसे–सूखा, गर्मी व खारापन सहन करने तथा रोग प्रतिरोधकता आदि की पहचान करने के लिए केन्द्रित शोध कार्यक्रम भी किये जाने चाहिए।
  - सेटेलाइट के प्रयोग को समाहित करते हुए ज्ञान चौपाल व ग्राम्य संसाधन केन्द्र बनाया जाना चाहिए जहां से सरकारी कृषि सेवाओं से जुड़े मूल्यवान मौसमी आँकड़े किसानों तक मोबाइल तकनीक के जरिये पहुंच सकें, उन्हें वर्षा व मौसम से सम्बन्धित सूचनाएं सही समय में उपलब्ध करा सकें।
  - बीज उपलब्धता के संकट को समझते हुए स्थानीय समुदाय को शामिल कर विकेन्द्रित बीज उत्पादन कार्यक्रम को किया जाना चाहिए। मुख्य फसल के बीज के साथ ही चारा और कृषि पारिस्थितिकी इकाई के अन्तर्गत हरी खाद पौधों के बीजों का उत्पादन एवं भण्डारण अवश्य किया जाना चाहिए।

भविष्य के लिए रणनीतिक शोध

जलवायु अनुकूलन व न्यूनीकरण शोध में तकनीकी व वित्तीय निवेश किया जाना आवश्यक है। प्राथमिकता के आधार पर कुछ क्षेत्र निम्नवत् हैं –

- नयी प्रजातियों एवं नस्लों के प्रजनन में प्रयोग हेतु बहुमूल्य लक्षणों जैसे उच्चतम तापमान से सहनशीलता, सूखा व लवणता, प्रभावी चारा रूपान्तरण और रोग प्रतिरोधक के लिए पारम्परिक प्रजातियों एवं पशु नस्लों का मूल्यांकन करना आवश्यक है।
- भोजन व चारा व्यवस्थाओं में संतुलन विकसित करना, जिससे देशी पशुओं के दुग्ध उत्पादन में वृद्धि होगी और मीथेन गैस का उत्सर्जन कम होगा।
- जलवायु लचीली फसल प्रजातियों को विकसित करने हेतु सहभागी व औपचारिक तरीके से पौधों को उगाना ताकि वे उच्चतम तापमान, सूखा व लवणता को सहन कर सकें।
- विशेषकर गेंहूं फसल में छोटी अवधि की प्रजातियों को विकसित करना ताकि गर्मी चरम पर पहुंचने से पहले ही उनकी परिपक्वता अवधि पूरी हो जाये।
- वृद्धि के समय ही अत्यधिक गर्मी पड़ जाने की वजह से घटने वाली उपज को सामान्य स्तर पर बनाये रखने के लिए फसल में जीन के प्रकार को चयनित करना होगा, जिससे उनकी प्रति दिन उपज क्षमता उच्चतम हो।
- वर्तमान में गेंहूं की मौजूदा प्रजातियों की उपज पहले गर्मी पड़ने के कारण लगातार घटती जा रही है। ऐसे में अधिक गर्मी सहिष्णु होने के कारण उत्तरी भारत में कठिया गेंहूं की प्रजातियों को विकसित करना होगा, साथ ही इन कठिया गेंहूं में रोटी बनने के गुण का भी विकास करना होगा।

वैश्विक उष्मीकरण और जलवायु परिवर्तन के कारण खाद्य, जल व स्वास्थ्य सुरक्षा आज की सबसे बड़ी दुर्घटना व मानव समाज के सामने सबसे बड़ी चुनौती भी है। इसके सामूहिक व अलग–अलग दोनों तरीके से प्रभाव दिखेगें। उष्ण कटिबन्धीय व शीतोष्ण क्षेत्रों में विकासशील देशों में लोग सर्वाधिक नुकसान के कारण दिक्कतें उठायेंगें। अतः यह आवश्यक है कि बिना समय गंवाये हमें खाद्य व जल सुरक्षा के लिए जलवायु लचीली प्रणाली को विकसित एवं क्रियान्वित करना होगा। ■

डॉ० सुमन सहाय
अध्यक्ष, जीन अभियान
जे–235/ए, लेन डब्ल्यू–15 सी,
सैनिक फार्म्स, खानपुर, नई दिल्ली–110062
ईमेल : mail@genecampaign.org

Greening the economy
LEISA INDIA, Vol. 14, No.2, Pg. # 20-22, June 2012

कीड़ों के साथ जीवन-यापन

एल० नारायण रेड्डी

प्रकृति ने बहुत सी वस्तुओं का निर्माण करने के बाद मानव जीवन बनाया ताकि हम सभी एक – दूसरे के साथ आसानी से व प्रसन्नता से रह सकते हैं। लेकिन हमारी स्मृति एवं सोचने की क्षमता आने के साथ ही हम स्वार्थी एवं आलसी हो गये तथा हम यह चाहने लगे कि प्रत्येक वस्तु सिर्फ हमारे लिए ही हो। हमारी बढ़ती लालच ने हमें इतना मूर्ख बना दिया कि हम अपने स्वार्थ के लिए प्रकृति की अन्य रचनाओं जैसे – सर्पों, चिड़ियों, छिपकलियों और इसी तरह के अन्य कीड़े–मकोड़ों की उपेक्षा करने लगे। फसलों से अधिक लाभ कमाने के लिए हमने जहर का छिड़काव किया, जिसमें मित्र कीट भी मारे गये। नतीजतन हमें कीटों व फसलों दोनों का नुकसान होने लगा और हमारी समस्याएं बढ़ती गयीं। कुछ लाख कीड़ों में से केवल कुछ सौ कीड़े ही फसलों, पालतू जानवरों एवं हमारे लिए नुकसानदायक होते हैं। हमारे पूर्वज फसल चक्रीकरण, सहयोगी पौध रोपण, अन्तः फसल की विधि अपनाकर सावधानीपूर्वक इन शत्रु कीटों को प्रबन्धित करते थे और स्थानीय मौसम के अनुकूल फसलें उगाते थे। वे सभी फसलों/पौधों को उनके लिए आवश्यक स्थान उपलब्ध कराते थे, जिससे कि प्रत्येक पौध पर्याप्त सूर्य प्रकाश और हवा को प्राप्त कर सके व फंफूदी व कीड़ों को पनपने से रोका जा सके। लेकिन आधुनिक विज्ञान का अनुसरण करने तथा अधिक लाभ कमाने के लालच के कारण हमने जीव–जन्तुओं की प्राकृतिक प्रक्रियाओं में अवरोध पैदा करना प्रारम्भ कर दिया और कीड़ों का नुकसान होने के कारण बहुत सी समस्याएं उत्पन्न होने लगीं। आज हमें यह देखने व समझने का समय ही नहीं है कि प्रकृति में क्या हो रहा है।

हजारों ऐसे कीड़े हैं, जिनका भोजन दूसरे कीड़े होते हैं। उदाहरण के लिए, रेंगने वाले कीड़े, दीमक चींटे–चींटियां, मकड़ियां, छोटी चिड़ियां, छिपकलियां, मेढक और इसी तरह के अन्य बहुत से कीड़े, लेडी बर्ड का भोजन बनते हैं। आश्चर्य की बात है कि प्रकृति अपने सभी जीव–जन्तुओं के प्रति ममत्व की भावना रखती है और महत्वपूर्ण है कि वह नुकसानदायक कीड़ों के अस्तित्व को भी बचाती है। उदाहरण के लिए मिली बग अपने शरीर के चारों तरफ मोम के एक महीन परत के साथ सूत का एक रेशा लपेटे रहता है ताकि दवाओं का छिड़काव होने पर उसके शरीर के अन्दर ये दवाएं आसानी से न प्रवेश कर सकें। केवल एक लेडी बर्ड ऐसी है, जो लार्वा की स्थिति में मिली बग के शरीर में प्रवेश कर उसे मार देती है। लेकिन जब हम रसायनों का छिड़काव करते हैं, तो हम मित्र कीटों को आसानी से मार देते हैं। टिड्डा का अगला पैर काफी लम्बा बिलकुल कंटीली हथेलियों की तरह होता है, जो दूर से ही अपने शिकार को देखकर खा लेता है और इस प्रकार प्रतिदिन वह सैकड़ों हानिकारक कीड़ों को खाता है। हजारों की संख्या में माटा पेड़ या चौड़ै पत्ते को खोजती हैं और 2–3 घण्टे में उसमें एक विशाल घोंसला बना देती हैं। इस कार्य में 25 प्रतिशत माटा मिलकर एक सफेद रंग के द्रव का उत्सर्जन करती हैं, जिससे पत्तियों का घोल तैयार होता है। शेष 75 प्रतिशत चीटिंयां एक–दूसरे के पैरों व कमर को पकड़कर एक मीटर तक की दूरी की एक श्रृंखला बनाती हैं ताकि एक बड़ा घोंसला बनाने तथा उसे चिपकाने हेतु पत्तियां खींचकर ला सकें। प्रत्येक दिन वे न केवल अपने पेड़ पर वरन् आस–पास के पेड़ों पर रहने वाली बहुत सी चूसने वाली छोटी कीटों जैसे थ्रिप्स, जासिड्स को खाती हैं। कुछ देशों में तो किसान धागा, रस्सी व बांस को अपने पेड़ों के साथ बांध देते हैं ताकि वे इस तरह से चीटियों को आने एवं चूसने वाले कीटों को खाने के लिए प्रबन्धित कर सकें।

जब कीड़े उड़ते हैं तो मकड़ियों द्वारा बुने जाल में फंस जाते हैं। दुर्भाग्य से, किसान मकड़ियों के लाभ को नहीं जानते हैं और कीटनाशकों के प्रयोग से उन्हें मार रहे हैं।किसान को यह जानकारी नहीं है कि रसायनिक कीटनाशकों से सबसे ज्यादा मित्र कीट मारे जा रहे हैं, जो हमारे लिए सहयोगी की भूमिका निभाते हैं और शत्रु कीटों को खत्म करने में अहम् भूमिका निभाते हैं। इसी के साथ इन रसायनों के छिड़काव से खेतों के बहुत से ऐसे मित्र कीट भी मारे जाते हैं, जो परजीवी की भूमिका निभाते हैं, जिससे फसलों का नुकसान हो रहा है और पैसा कम मिल रहा है। किसानों को इस बात के लिए प्रशिक्षित करने की आवश्यकता है कि फसलों में लगने वाले रोग, व्याधियों व कीटों आदि से बचाव के लिए जैव उत्पादों जैसे नीम खली, नीम तेल आदि के प्रयोग द्वारा मित्र कीटों को बचाना बहुत महत्वपूर्ण है। ये न केवल पर्यावरणसम्मत होते हैं, वरन् सुरक्षित व कम लागत वाले भी होते हैं। यदि हमारे देश में सभी पाठ्यक्रमों के लिए राजनीति विज्ञान एक आवश्यक विषय है, तो यह बहुत हैरत की बात है कि ''जैविक खेती'' को सभी पाठ्यक्रमों के लिए एक आवश्यक विषय क्यों नहीं बनाया गया है, जबकि यह स्वस्थ भोजन व अच्छे वातावरण के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। यहां हमें यह समझने की आवश्यकता है कि मनुष्य ही प्रकृति की सभी वस्तुओं से छेड़–छाड़ कर रहा है और इससे सभी जीवित वस्तुओं का अस्तित्व खतरे में है।

■

एल० नारायण रेड्डी
श्री निवासपुरा, वाया मारेलानाहाली
हनाबे पोस्ट-561203, डोडाबल्लापुर तालुक,
बंग्लौर देहात क्षेत्र, कर्नाटक, भारत

Insects as Allies
LEISA INDIA, Vol. 14, No.1, Pg. # 29, March 2012

किसान समूह के सदस्य

सामूहिक खेती, सामूहिक लाभ महिला किसान समूह की एक कहानी

सुरेश कन्ना

भूमि पर विशेषकर गरीब महिलाओं की पहुंच ना के बराबर है। यह समस्या तब और भी भयंकर हो जाती है, जब महिलाएं अकेली हों या परिवार से उपेक्षित हों। ऐसी स्थिति में उन्हें भूखमरी और बेहद तंगहाली का जीवन गुजारना पड़ता है। इन सारी समस्याओं व कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुए तमिलनाडु की महिलाओं ने संगठित होकर सफलता पाई है। उन्होंने सामूहिक खेती कर न सिर्फ परिवार की खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित की है वरन् समाज में भी उन्हें एक सम्मान मिला है।

सामान्यतः भारत के लगभग सभी गांवों में लगभग 20–30 प्रतिशत से ऐसी महिलाएं हैं, जो अकेले जीवन गुजारती हैं। ये महिलाएं या तो वे विधवा हैं, या परिवार व समाज द्वारा परित्यक्त। इन महिलाओं के कन्धे पर अपने बच्चों व परिवार के अन्य बड़े सदस्यों की जिम्मेदारी होती है। ये महिलाएं या तो भूमिहीन होती हैं अथवा इनके पास बहुत ही कम जोत होती है, वह भी वर्षा आधारित होती है। भूमि पर स्वामित्व तथा संसाधनों पर पहुंच न होने एवं खेत प्रबन्धन की उचित तकनीकी क्षमता न होने के कारण ये महिलाएं खेती व पशुपालन बहुत नहीं कर पाती हैं और अधिकांशतः इनकी आजीविका दैनिक मजदूरी पर आधारित होती है।

तमिलनाडु महिला समूह 35 महिलाओं का एक नेटवर्क है, जो एक अलाभकारी संस्था है। यह संस्था तमिलनाडु में गरीब व सीमान्त महिलाओं के सशक्तिकरण हेतु कार्य कर रही है। सोसायटी रजिस्ट्रेशन एक्ट के तहत 1994 में गठित यह संस्था तमिलनाडु के 20 जनपदों में कार्य कर रही है।

गांवों में रहने वाली एकल, विधवा व परित्यक्त तथा भूमिहीन महिला किसानों की स्थिति जानने के उद्देश्य से इस समूह ने 13 जनपदों में एक अध्ययन किया। यह अध्ययन तमिलनाडु महिला समूह के अन्तर्गत गठित महिला किसान संगम के साथ मिलकर पूरा किया गया, जो कि पहले से ही तमिलनाडु के गांवों में गठित एवं काम कर रही थीं। संगम ने यह भी अध्ययन किया कि इस क्षेत्र में कितनी अप्रयुक्त व गैर कृषिगत भूमि उपलब्ध हैं। संगम की बैठक में अध्ययन से प्राप्त परिणामों पर विस्तार से चर्चा करने के साथ ही इस विषय पर भी चर्चा की गयी कि ये भूमिहीन महिलाएं अप्रयुक्त भूमि पर किस प्रकार की कृषिगत गतिविधियां कर सकती हैं। चर्चा के दौरान ही सामूहिक खेती का विचार उत्पन्न हुआ। इस सामूहिक खेती का मुख्य उद्देश्य न केवल इन परिवारों की खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करना था, वरन् यह भी सुनिश्चित करना था कि जैविक कृषि पद्धति से खेती की जाये ताकि लोगों को सुरक्षित भोजन मिल सके।

कई बार चर्चा होने के बाद सामूहिक खेती को प्रोत्साहित करने हेतु कुछ निश्चित आधार चिन्हित किये गये। यह तय हुआ कि सामूहिक खेती निम्नवत् सिद्धान्तों पर आधारित होगी –

- सामूहिक खेती हेतु गठित समूह में अधिकतम 10 सदस्य होगें, जिनमें विधवा, भूमिहीन अथवा एकल महिलाओं को प्राथमिकता के आधार पर शामिल किया जायेगा।
- समूह तय करेगा कि सामूहिक खेती हेतु भूमि का क्षेत्रफल क्या होगा?
- सामूहिक खेती हेतु लीज पर जमीन तीन वर्षों के लिए ली जायेगी।
- उत्पादित फसल का एक तिहाई भाग भूमि के स्वामी को दिया जायेगा।
- सभी सदस्य इस बात पर सहमत होंगे कि दैनिक प्रयोग वाली फसलों जैसे अनाज, सब्ज़ियां व दालें उगाई जायेंगी।
- आय–व्यय के लेखा–जोखा में पारदर्शिता रखने के लिए समूह बैंक में खाता, लेखा–जोखा रिकार्ड व रजिस्टरों को सुव्यवस्थित रखेगा।

वर्तमान में, तमिलनाडु के टूटीकोन, विरूधूनगर, मदुरै, सालेम, तिरूवन्नामलाई, वेल्लोर, कांचीपुरम और तिरूवेल्लुर जिले के 13 गांवों में कुल 15 किसान समूहों के साथ सामूहिक खेती से सम्बन्धित समस्त गतिविधियां सफलतापूर्वक सम्पादित की जा रही हैं।

आपसी खेती

सामूहिक रूप से खेती करने वाले किसानों के लिए विभिन्न विषयों जैसे – सहभागी नियोजन, निर्णय लेने की क्षमता, फसल चयन, खेती की तकनीक आदि पर विशय विशेषज्ञों जैसे – डा0 जी. नाम्मलवर के साथ प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किये गये। ये प्रशिक्षण कार्यक्रम विभिन्न विषयों जैसे विभिन्न प्रकार के जैव निवेशों आदि पर महिलाओं की व्यवहारिक क्षमता विकसित करने में सहायक सिद्ध हुए। निरन्तर सहयोग और निर्देशन के कारण महिला किसान सामूहिक रूप से खेती पर आवश्यक क्षमता विकसित कर सकीं और उनके अन्दर निर्णय लेने तथा नेतृत्व करने की क्षमता का विकास हुआ। तमिलनाडु महिला समूह ने समूह से जुड़ी प्रत्येक महिला किसान को बीज धनराशि के रूप में रू0 1000.00 की सहायता प्रदान की ताकि वे बीज व अन्य जैव निवेश खरीद सकें।

खेती की अवधि के दौरान होने वाली साप्ताहिक बैठकों में काम के आवंटन का निर्णय लिया जाता है। चक्रीय प्रक्रिया के आधार पर खेती से जुड़े सभी कामों का बंटवारा सभी सदस्यों में समान रूप से किया जाता है। इससे सभी सदस्यों की संलग्नता खेती से जुड़े सभी कार्यों में होती है। बैठक में यह तय किया गया कि सामूहिक रूप से की जाने वाली खेती मुख्यतः खेती में संलग्न परिवारों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए होगी, न कि इससे प्राप्त उत्पादों को बाजार में बेचा जायेगा। सामूहिक खेती से प्राप्त उत्पादों से परिवार की कम से कम 15 दिन की भोजन आवश्यकता की पूर्ति होती है और खेत की निराई कर घास का उपयोग जानवरों के लिए चारा के रूप में भी किया जा रहा है। समूह के रूप में संगठित किसान अपने आस–पड़ोस में रहने वाले भूमिधर किसानों से भी सहयोग करते हैं। ये भूमिधर किसान जैविक खाद तैयार करने में लगने वाला कच्चा माल जैसे– गाय का गोबर, गौमूत्र आदि उपलब्ध

सामूहिक प्रक्षेत्र पर मूँगफली की खुदाई करतीं सदस्य

कराकर इन महिलाओं की सहायता कर इन्हें उत्साहित करते हैं। भूमिहीन किसानों व भूमिधर किसानों के बीच सीखने और साझा करने की यह प्रक्रिया उनके बीच के सम्बन्धों को मजबूत करती है।

इसमें कुछ चुनौतियां भी हैं, जिनमें मानसून का देरी से आना और बिजली की बेतहाशा कटौती महत्वपूर्ण है। इसके साथ ही सामूहिक खेती के लिए प्राप्त जमीन की उर्वरत बहुत ही कम लगभग बेकार जमीन हो चुकी है। इसे पुनः उर्वरक बनाने के लिए अधिक कार्बनिक निवेश की आवश्यकता पड़ेगी। परन्तु इन चुनौतियों/कठिनाईयों से निराश न होकर इन्हें दूर करने हेतु इन महिलाओं को वैकल्पिक खेती के तरीके बताये जा रहे हैं। उनके अन्दर यह विश्वास उत्पन्न किया जा रहा है कि इन तरीकों को निरन्तर अपनाने से मृदा स्वास्थ्य को उन्नत बनाने में सहयोग मिलेगा जिससे भविष्य में उन्हें बेहतर परिणाम मिलेगा। महिलाओं को बीज उत्पादन करने तथा उनके गांव में एक बीज बैंक स्थापित करने हेतु कृषिगत गतिविधियों में सहयोग के लिए उच्च लागत निवेश कर बीज खरीद कर दिया गया।

हम बहुत प्रसन्न हैं कि हमारे पास जमीन का एक छोटा टुकड़ा है, जहां पर हम खेती करने और जैविक कृषि पद्धति से जुड़े अनुभवों को प्राप्त करने में सक्षम है। हमें बहुत खुशी और गर्व है कि हम एक ऐसे किसान हैं, जो अपने परिवार को जहर मुक्त खाना खिला रहे हैं, जिससे उनके स्वास्थ्य की बेहतरी सुनिश्चित हो पा रही है। एक महिला किसान

अधिक जानकारी के लिए सुश्री पोन्नुथैयी, तमिलनाडु महिला संघ, 79 नं0, सेनबाग विन्यागार कोल स्ट्रीट, कीझा बाजार, 7वां वार्ड, वासुदेवानाल्लुर, सिवागिरी तालुक, विरूधुनगर– 627 758, फोन नं0 94448 32021 से सम्पर्क किया जा सकता है।

■

सुरेश कन्ना
उप निदेशक व वरिष्ठ दल सदस्य
कुडुम्बम, नं० 148, हाइवेज कालोनी, सुब्रम्ह्मनपुरम, त्रची– 620 020
इमेल : sureshkanna_kudumbam@yahoo.in

Farmer Organisations
LEISA INDIA, Vol. 14, No.3, Pg. # 32, September 2012

अन्तर्राष्ट्रीय पारिवारिक खेती वर्ष : 2014

यूनाइटेड नेशन्स की साधारण सभा द्वारा वर्ष 2014 को अन्तर्राष्ट्रीय पारिवारिक खेती वर्ष के रूप में घोषित किया गया है। पारिवारिक खेती में उन सभी महिला व पुरूष खेतिहर परिवारों को शामिल किया गया है, जिनके पास छोटी जोत है और जो पारिस्थितिकी कृषि तरीके को अपने खेती में अपनाते हैं। सम्पूर्ण विश्व में इस प्रकार की पारिवारिक खेती सफलतापूर्वक करने वाले परिवारों की संख्या लाखों में है। अन्तर्राष्ट्रीय पारिवारिक खेती वर्ष, 2014 का मुख्य उद्देश्य, सभी देशों में, परिवार इकाई पर आधारित कृषि तंत्र के सतत् विकास के पक्ष में एक वास्तविक सक्रिय नीति को प्रोत्साहित करना है।

यूरोप में स्थित एक अन्तर्राष्ट्रीय स्वयंसेवी संस्था विश्व ग्रामीण फोरम पांच महाद्वीपों के 130 देशों की 365 संस्थाओं के सहयोग से सफलतापूर्वक एक अभियान चला रही है। खाद्य एवं कृषि संस्थान (एफ0ए0ओ0) व आई0एफ0ए0डी0 के साथ सघन व नियमित सम्पर्क तथा व्यापक बात–चीत के बाद इस घोषणा को अमली जामा पहनाया जा सका। ब्हुत से देशों में, राष्ट्रीय स्तर पर अन्तर्राष्ट्रीय पारिवारिक खेती वर्ष कमेटी का गठन हो चुका है। इन गठित समितियों ने पारिवारिक खेती को प्राथमिकता के तौर पर सहायता प्रदान करने के लिए बड़ी संख्या में गतिविधियों, घटनाओं, शोधों, बैठकों, उत्सवों और नीति प्रपत्र तैयार करने व सामने लाने को प्रारूपित किया है। भारत में, इस विशिष्ट पर्व हेतु अभियान संचालित करने के लिए 'ए0एम0ई0 फाउण्डेशन', बंगलौर के साथ–साथ 'सेवा', गुजरात से अनुरोध किया गया है। 'ए0एम0ई0' फाउण्डेशन और 'सेवा' पूरे देश में कुछ चयनित संस्थाओं के सकारात्मक सहयोग से उनके अपने क्षेत्र में इस पर्व को सफलतापूर्वक मना रहा है।

हालांकि भारत में विभिन्न स्थानों सहित पूरे विश्व में इस अभियान/वर्ष का प्रतीकात्मक प्रारम्भ 22 नवम्बर, 2013 से ही हो गया है। हमें पूरी आशा है कि अन्तर्राष्ट्रीय पारिवारिक खेती वर्ष सभी कृषिगत परिवारों की मांगों को एक एक नयी पहचान व ऊर्जा देगा और लाखों–करोड़ों महिला व पुरूष किसानों की आजीविका में एक उल्लेखनीय वृद्धि होगी। ■

Issues and Themes of LEISA INDIA Published in English 1999-2013

V.1, No. 1, 1999 - Markets for LEISA and Organic products
V.1, No. 2, 1999 - Stakeholders in Research
V.1, No. 2, 1999 - Restoring biodiversity

V.2, No. 1, 2000 - Desertification
V.2, No. 2, 2000 - Farmer innovations
V.2, No. 3, 2000 - Farming in the forest
V.2, No. 4, 2000 - Monocultures towards sustainability

V.3, No. 1, 2001 - Coping with disaster
V.3, No. 2, 2001 - Go global stay local
V.3, No. 3, 2001 - Lessons in scaling up
V.3, No. 4, 2001 - Biotechnology

V.4, No. 1, 2002 Managing Livestock
V.4, No. 2, 2002 - Rural Communication
V.4, No. 3, 2002 - Recreating living soil
V.4, No. 4, 2002 - Women in agriculture

V.5, No. 1, 2003 - Farmers Field School
V.5, No. 2, 2003 - Ways of water harvesting
V.5, No. 3, 2003 - Access to resources
V.5, No. 4, 2003 - Reversing Degradation

V.6, No. 1, 2004 - Valuing crop diversity
V.6, No. 2, 2004 - New generation of farmers
V.6, No. 3, 2004 - Post harvest Management
V.6, No. 4, 2004 - Farming with nature

V.7, No. 1, 2005 - On Farm Energy
V.7, No. 2, 2005 - More than Money
V.7, No. 3, 2005 - Contribution of Small Animals
V.7, No. 4, 2005 - Towards Policy Change

V.8, No. 1, 2006 - Documentation for Change
V.8, No. 2, 2006 - Changing Farming Practices
V.8, No. 3, 2006 - Knowledge Building Processes
V.8, No. 4, 2006 - Nurturing Ecological Processes

V.9, No. 1, 2007 - Farmers Coming together
V.9, No. 2, 2007 - Securing Seed Supply
V.9, No. 3, 2007 - Healthy Produce, People and Environment
V.9, No. 4, 2007 - Ecological Pest Management

V.10, No. 1, 2008 -Towards Fairer Trade
V.10. No. 2, 2008 - Living soils
V.10, No. 3, 2008 - Farming and Social Inclusion
V.10, No. 4, 2008 - Dealing with Climate Change

V.11, No. 1, 2009 - Farming Diversity
V.11, No. 2, 2009 - Farmers as Entrepreneurs
V.11, No. 3, 2009 - Women and Food Sovereignty
V.11, No. 4, 2009 - Scaling up and sustaining the gains

V.12, No.1, 2010 - Livestock for sustainable livelihoods
V.12, No.2, 2010 - Finance for farming
V.12, No.3, 2010 - Managing water for sustainable farming

V.13, No.1, 2011 - Youth in farming
V.13, No.2, 2011 - Trees and farming
V.13, No.3, 2011 - Regional Food System
V.13, No.3, 2011 - Securing Land Rights

V.14, No.1, 2012 - Insects as Allies
V.14, No.2, 2012 - Greening the Economy
V.14, No.3, 2012- Farmer Organisations
V. 14, No.4, 2012- Combating Desertification

V. 15, No.1, 2013- SRI: A scaling up success
V. 15, No.2, 2013- Farmers and market
V. 15, No.3, 2013- Education for change
V. 15, No.4, 2013- Strengthening family farming

गरीबी निवारण
गरिमा, पारिस्थितिकी विकास या सिर्फ पैसा ?

पी०वी० सतीश

आज जबकि प्रत्येक व्यक्ति ''हरित अर्थव्यवस्था'' के बारे में बात कर रहा है, क्या हम यह देख पा रहे हैं कि उसमें अवधारणा की ही विशेष आलोचना हो रही है। यद्यपि कि इन कठिन शब्दावलियों को समझना मुश्किल है, लेकिन बहुत से लोग इससे असहज महसूस कर रहे हैं। लोगों का यह मानना है कि वास्तव में ''हरित अर्थव्यवस्था'' ''लालची अर्थव्यवस्था'' है।

''आज हम गरीबी को एक व्यापक परिप्रेक्ष्य में देख रहे हैं जो मौद्रिक परिप्रेक्ष्य से सम्प्रभुता परिप्रेक्ष्य की ओर, अधिकार परिप्रेक्ष्य से स्वायत्तता परिप्रेक्ष्य की ओर दूर जा रही है।''

वर्ष 2009, स्थान : कोपेनहेगेन, जहां जलवायु पर शिखर सम्मेलन चल रहा था। जिसमें यूनाईटेट नेशन्स की तरफ से आये एक प्रख्यात वक्ता उत्तरी अमेरिकी राज्य कैलिफोर्निया के गर्वनर अर्नाल्ड श्वार्जनेगर महाधिवेशन को सम्बोधित कर रहे थे। जब उन्होंने वैश्विक उष्मीकरण को कम करने के लिए अपने द्वारा किये जा रहे प्रयासों पर बोलना शुरू किया तो मुझ सहित सत्र में उपस्थित बहुत से प्रतिभागी भ्रम में पड़ गये। यह भ्रम तब और बढ़ गया, जब उन्होंने उसमें निम्न दो बातों को जोड़ा –

- उन्होंने बताया कि वे अपने यहां बड़े–बड़े ओलम्पिक आकार के तरण तालों को गर्म करने के लिए बिजली के स्थान पर सोलर ऊर्जा का उपयोग करने लगे हैं।
- दूसरी बात यह कि उन्होंने अपने एसयूवी के बेड़े को संकर में परिवर्तित कर दिया है।

शायद सबसे बड़ा आश्चर्यजनक पहलू तो यह रहा कि उनके इस भाषण पर पूरी सभा ने खड़े होकर तालियों के साथ जयघोष किया। सबसे अधिक हास्यास्पद स्थिति तो यह थी कि इस महाधिवेशन में श्री श्वार्जनेगर को तो आमन्त्रित किया गया, लेकिन एक भी ऐसे किसान या देशी व्यक्ति को वहां पर आमन्त्रित नहीं किया गया, जो उनसे यह पूछ सके कि एक या दो परिवार के उपयोग हेतु 2,500,000 लीटर पानी को क्यों गर्म किया जाता है, जिसमें अक्षया या अन्य ऊर्जा की खपत बड़े पैमाने पर होती है। इस बात को भी स्पष्ट करने की आवश्यकता है क्या यह ''हरित व अच्छा'' है। जब हम हरित अर्थव्यवस्था के विचार को चर्चा हेतु विभिन्न कठिन परिस्थितियों में रहने वाले लाखों लोगों के बीच में ले जाएंगे तो यह आशंका है कि क्या हमारे अर्थशास्त्री गरीबी से निपटने हेतु उनकी सहायता करेंगें?

परिभाषा

लेकिन क्या हम गरीबी को परिभाषित कर पा रहे हैं? मैं एक स्कूल जाने वाले बच्चे को याद करता हूँ, जिससे जब गरीबी पर लिखने के लिए कहा जाता है, तो वह लिखता है – ''मैं गरीब हूं, इसलिए मैं इसके विषय में जानता हूं। मेरा ड्राइवर भी गरीब है, मेरा खाना बनाने वाला और भी गरीब है, मेरा माली भी गरीब है।'' यदि हम हरित अर्थव्यवस्था के विचार को लाखों लोगों की गरीबी से जोड़ेगें तो निश्चित रूप से श्री श्वार्जनेगर के रूप में यह एक तमाशा ही होगा। गरीबी की बहुत सी परिभाषाएं इसे एक समान ही व्याख्यायित करती हैं। भारतीय योजना आयोग इसका एक विशिष्ट उदाहरण है, जहाँ रू0 27.00 प्रति व्यक्ति आय को गरीबी रेखा मानी गयी है। इस आय की गणना हमेशा ही सकल घरेलू उत्पाद में एक व्यक्ति के योगदान के आधार पर की जाती है। लेकिन सकल घरेलू उत्पाद स्वयं में एक दूसरी तरह का धोखा है। देवेन्दर शर्मा के अनुसार, यदि एक वृक्ष खड़ा है तो वह घरेलू उत्पाद में योगदान नहीं कर रहा है लेकिन यदि वह कट कर इमारती लकड़ी में बदल गया तो उसका योगदान सकल घरेलू उत्पाद में जुड़ जाता है। युनाईटेड नेशनस की एक दूसरी कान्फ्रेंस में सकल घरेलू खुशी विषय पर विचार–विमर्श किया जा रहा था जिसमें भूटान के भूतपूर्व प्रधानमंत्री श्री ल्योनपो जिगनी थिनली ने कहा कि ''हमें मानव के विषय में व्यापक संदर्भ में बेहतर समझ विकसित करनी होगी। वस्तु को अच्छी तरह से समझना मात्र एक घटक है जो यह सुनिश्चित नहीं करता कि आप अपने वातावरण में लोगों के साथ शान्ति व सद्भाव के साथ रह रहे हैं। सकल घरेलू उत्पाद आधारित विकास माडल की आर्थिक संवेदना लम्बे समय

तक नहीं रहती। इसका मुख्य कारण हमारा गैर जिम्मेदाराना, अनैतिक व आत्म केन्द्रित व्यवहार है। आगे जोड़ते हुए थिनली महोदय ने कहा कि विकास का उद्देश्य सभी नागरिकों के लिए प्रसन्नता के उद्देश्य को प्राप्त करने हेतु जन नीति के द्वारा उपयुक्त परिस्थितियां निर्मित करनी चाहिए।''न्यूयार्क में कोलम्बिया विश्वविद्यालय के प्रसिद्ध विकास अर्थशास्त्री और विश्व प्रसन्नता की रिपोर्ट के लेखक जेफ्री सेच कहते हैं कि ''केवल सकल राष्ट्रीय उत्पाद के द्वारा ही प्रसन्नता को नहीं प्राप्त किया जा सकता है। वर्ष 1960 के बाद से अमेरिका में प्रति व्यक्ति सकल राष्ट्रीय उत्पाद में तीन बार वृद्धि हुई, फिर भी प्रसन्नता नहीं बढ़ी, जबकि दूसरे देशों ने प्रति व्यक्ति आमदनी बहुत कम होते हुए भी दूसरी नीतियों का अनुसरण कर बेहतर प्रसन्नता प्राप्ति की। दूसरे शब्दों में, ''हरित अर्थव्यवस्था'' को एक नयी अवधारणा के तौर पर न लेते हुए ''सामान्य तौर पर व्यापार'' की तरह ही देखना चाहिए।

दक्कन डेवलपमेण्ट सोसाइटी का एक विचार

दक्कन डेवलपमेण्ट सोसायटी जमीन से जुड़ी एक संस्था है, जिसके साथ मैं पिछले 25 वर्षों से जुड़ कर दक्षिणी प्रदेश आन्ध्र प्रदेश के अर्ध शुष्क मेदक जिले में कार्य कर रहा हूँ। सामाजिक रूप से वंचित समुदाय के लगभग 5000 लघु सीमान्त महिला किसानों के साथ संस्था कार्य कर रही है। ये लोग गरीब होने के कारण आर्थिक परिप्रेक्ष्य में, दलित होने के नाते सामाजिक रूप से व महिला होने के नाते विभिन्न लिंग आधारित समस्याओं को झेलते सीमान्त श्रेणी में बंट जाते हैं। ऐसे में इन समूहों के साथ काम करना एक चुनौती है। पहले हमारा सीधा सा उद्देश्य गरीबी निवारण था। लेकिन, जब हमने लोगों के साथ काम करना शुरू किया तो हमने स्वयं यह विचार किया कि– क्या हमने वास्तव में गरीबी में कोई परिवर्तन किया? परिवर्तन की इसी पंक्ति में आज हम गरीबी को एक व्यापक परिप्रेक्ष्य में देख रहे हैं, जो मौद्रिक परिप्रेक्ष्य से सम्प्रभुता की ओर व अधिकार परिप्रेक्ष्य से स्वायत्ता की ओर जा रही है। इसने हमें स्वायत्त व समुदाय नियंत्रित खाद्य प्रणाली, स्वायत्त स्वास्थ्य देख रेख प्रणाली, स्वायत्त बाजार व एक स्वायत्त मीडिया दिया है।

क्या ये सभी गतिविधियां गरीबी से सम्बद्ध है? अब हम यहां फिर से गरीबी की परिभाषा पर वापस आते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में, यदि दलित समुदाय से जुड़ी कोई महिला, अपनी खाद्य व स्वास्थ्य आवश्यकता के प्रति एक संतोषजनक तरीके से सजग रहने, अपने समूह के साथ मिलकर एक स्वायत्तशासी बाजार बनाने, समुदायिक रेडियो स्टेशन के माध्यम से अपनी बातें, अपने विचार लोगों के सामने रखने तथा, अपनी सामूहिक गतिविधियों का विडियो तैयार करने, उस पर फिल्म बनाने में सक्षम हो तो भी उसे गरीब ही कहना चाहिए, क्योंकि उसकी मासिक आमदनी 2 डालर प्रतिदिन से कम होगी। इसके विपरीत यदि वह 3 डॉलर प्रतिदिन कमाती है, लेकिन वह अपने खाद्य, पोषण या स्वास्थ्य देख–रेख के लिए बाहरी बाजार पर निर्भर है और उसके पास अपने विचारों/सुझावों को जनता के बीच रखने का कोई माध्यम नहीं है, तो क्या वह अपनी गरीबी से निपट सकेगी?

संस्था जिन छोटे, सीमान्त किसानों के साथ काम कर रही है, वे अपनी गरीबी दूर कर सकने में सक्षम हो सके हैं। औसतन 2 एकड़ जोत भूमि वाले ये छोटे सीमान्त किसान जैव विविधीकृत खेती प्रणाली को अपनाकर अपने परिवार के वर्ष भर उपभोग करने हेतु सभी प्रकार के अनाज, दालें व तिलहन उगाते हुए खाद्य उत्पादन और उपभोग के सन्दर्भ में आत्मनिर्भर हो रहे हैं। आज के दिनों में,

- दक्कन डेवलपमेण्ट सोसायटी से जुड़े परिवारों में उपभोग का औसत प्रतिव्यक्ति अनाज 500 ग्राम व 50 ग्राम दाल है। भारत की ताजा आर्थिक सर्वेक्षण के अनुसार ये परिवार अन्य भारत की तुलना में लगभग 20 प्रतिशत अधिक अनाज और 40 प्रतिशत अधिक दाल खा रहे हैं।
- पैसा खर्च करने के सन्दर्भ में, इन परिवारों में से लगभग 85 प्रतिशत परिवार खाने पर प्रति व्यक्ति रू0 100 से भी कम खर्च करते हैं। इनमें से अधिक अपना खाद्य स्वयं उगाते हैं जिससे, संस्था से जुड़े प्रत्येक पांच में से एक परिवार रू0 1500/– बचत करता है। वे अतिरिक्त आमदनी के लिए अपने खेतों में उगे दलहनी फसलों का लगभग 70% व चारे का 60% बेचते हैं।
- दक्कन डेवलपमेण्ट सोसायटी से जुड़े सभी समुदायों में अपनी

एक बैठक में सहभागिता करती संघ की सदस्य

स्वयं की जन वितरण प्रणाली स्थापित है। वे पोषक मोटे अनाजों को उगाते हैं, जो स्थानीय परिस्थितियों की कृषिगत पारिस्थितिकी को ध्यान में रखकर अपनाये गये हैं। इस प्रणाली के माध्यम से, वे न केवल अपने समुदाय के छोटे व सीमान्त किसान परिवारों, अपितु भूमिहीन परिवारों की भी देख–रेख कर ले रहे हैं। कुछ वर्षों पहले, उन्होंने अपने गांवों का भूख मानचित्रण किया और पाया कि ऐसे बहुत से परिवार हैं, जो अपने लिए दोनों वक्त का खाना नहीं जुटा पा रहे हैं, तब उन्होंने वहाँ पर सामुदायिक भोजन गृह का प्रारम्भ किया। इस प्रकार वे भोजन प्राप्तकर्ता से प्रदाता की श्रेणी में आ गये हैं।

यह भी कहा जा सकता है कि कृषि महंगे उर्वरक व कीटनाशकों पर विश्वास नहीं करती। पौधों की देख–रेख एवं पौध वृद्धि के लिए कृषि खाद, घरेलू स्तर पर बनाये गये जैव उर्वरकों व वनस्पति आदि से तैयार कीटनाशकों आदि का प्रयोग कर रहे हैं। सभी बीज उनके स्वयं के हैं, जिसे वे साल–दर–साल बचा रहे हैं। इस प्रकार बीज, खाद एवं कीटनाशकों पर होने वाले सभी खर्चों को बचाते हुए वे प्रति फसली मौसम में प्रति एकड़ औसतन रू0 2000/– की बचत कर रहे हैं। वे किसी भी बाहरी ऊर्जा का उपयोग नहीं कर रहे हैं और इस प्रकार ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन न करते हुए स्वच्छ ऊर्जा का संतुलन बनाये हुए हैं। अपने स्वास्थ्य की देख–रेख हेतु प्रत्येक समुदाय में उनके स्वयं के स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता हैं। ये स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता सामान्यतः समुदाय की सभी छोटी–मोटी बीमारियों का उपचार निःशुल्क करते हैं और उनसे कोई भी व्यक्ति सम्पर्क कर सकता है। यह उल्लेखनीय है कि ये सिर्फ आयुर्वेदिक औषधि ही बनाते हैं। पिछले दशक में, दक्कन डेवलपमेण्ट सोसायटी के स्वास्थ्य कार्यकर्त्ताओं ने 50 गांवों के लोगों के स्वास्थ्य पर होने वाले खर्च में कटौती की और इस प्रकार लगभग 7.5 मिलियन रू0 की बचत प्रत्येक वर्ष हुई। अतिरिक्त तौर पर, समुदायों ने 29 औषधीय क्षेत्र विकसित किये हैं। प्रत्येक क्षेत्र में 50 से अधिक पौध प्रजातियां हैं और इनमें से प्रत्येक का अपना एक अलग औषधीय गुण है। समुदाय के प्रत्येक व्यक्ति की पहुंच इन क्षेत्रों तक है और वे इससे अपने स्वयं द्रव्य तैयार कर सकते हैं, जिसके लिए उन्हें कोई शुल्क नहीं देना होता है।

उनके बाजार विकल्पों के बारे में, दक्कन डेवलपमेण्ट सोसायटी "वालकुट्स बाजार" के नाम से अपना स्वयं का बाजार चला रही है। यह एक सहकारी बाजार है, जिसका संचालन 11 महिलाओं की एक समिति के द्वारा किया जाता है। इस बाजार से सम्बन्धित सभी निर्णय लोकतान्त्रिक ढंग से लिये जाते हैं, जिसमें किसानों द्वारा तैयार उत्पाद के मूल्य का निर्धारण भी शामिल है। इस बाजार का प्रत्येक सदस्य अपने उत्पाद पर बाहरी बाजारों की अपेक्षा 10% से भी अधिक मूल्य प्राप्त करता है और बाजार से खरीदने वाले प्रत्येक उत्पाद पर भी उसे 10% की छूट दी जाती है। प्रत्येक वर्ष, सहकारी लाभांश भी वितरित किया जाता है। संस्था से जुड़ी महिलाओं में से लगभग 80% "पारिस्थितिकी उद्योग" के विभिन्न स्वरूपों से जुड़ी हुई हैं और इसके मूल में उनके पालतू जानवर हैं, जिन्हें वे बढ़ा भी रही हैं। प्रत्येक परिवार के पास एक बकरी या एक भैंस और एक बैल व कम से कम 6–7 मुर्गियां हैं। किसी–किसी परिवार के तो ये सभी जानवर हैं। इन जानवरों के दूध व मांस से इन परिवारों को प्रति माह लगभग रू0 2500/– की आमदनी हो जाती है। ऊपर से, ये जानवर खाद का एक बेहतर स्रोत भी हैं। अधिकतर परिवार जैव उर्वरक उत्पाद तैयार करते हैं। औसतन प्रतिवर्ष एक परिवार 1.5 टन जैव उर्वरक तैयार करता है, जो रू0 6.00 प्रति किग्रा0 की दर से बिक जाता है। जानवर लगभग 6 टन कृषि खादों को उत्पादित कर प्रत्येक वर्ष लगभग रू0 1500/– तक बचाते हैं। अन्ततः हम यह भी कह सकते हैं कि 1990 के बाद,

नई जन वितरण प्रणाली के तहत ज्वार वितरित करती संघ की सदस्य

दक्कनडेवलपमेण्ट सोसायटी ने लाखों पौधों को विभिन्न 35 स्थानों पर लगाकर आस–पास जंगल तैयार किया है या फिर सामूहिक औषधीय परिक्षेत्र भी तैयार किया है। प्रत्येक परिक्षेत्र में 80 से अधिक पौध प्रजातियां हैं, जिनसे यहां रहने वाले लोगों की चारा, फलों, ईंधन एवं इमारती लकड़ियों की आवश्यकता पूर्ति होती है।

एक वैध विकल्प

इन सभी कारकों को जोड़ते हुए मैं यह तथ्य भी उद्घृत करना चाहूंगा कि दक्कन डेवलपमेण्ट सोसायटी ने प्रचलित आयजनक गतिविधियों से अलग हटकर कुछ नये प्रकार के प्रारूपों को चुना, ताकि एक समुदाय को पारिस्थितिकी अवधारणाओं के साथ मिलकर कार्य करने की प्रेरणा मिले। इससे जिले को क्षेत्र में एक कृषि पारिस्थितिकी क्षेत्र स्थापित करने में मदद मिली है और अब यहां पर राष्ट्रीय जैव विविधीकृत अभिकरण द्वारा मान्य कृषि जैव विविधीकृत क्षेत्र स्थापित है। इसी प्रक्रिया में, हमारे कार्य से न केवल इन समुदायों की खाद्य व पोषण सुरक्षा में वृद्धि हुई है, वरन् इन्हें इस योग्य भी बनाया जा सका है कि ये एक सम्मानित जीवन बिता सकें, पर्यावरण एवं उसमें अपनी भूमिका को समझते हुए उस पर विश्वास कर सकें। हमारी सफलता के पीछे विभिन्न कारण हैं, जिनमें से सबसे पहला तो यह है कि संस्था ने बहुत ही छोटे स्तर से अपना काम शुरू किया व महिलाओं द्वारा तैयार की गई कार्यसूची को ही अपनाया। इसने लोगों को नहीं प्रस्तुत किया, वरन् लोगों ने खुद अपने–आपको प्रस्तुत किया। यही कारण रहा कि समुदाय ने अपनी लड़ाई खुद लड़ी और उसमें सफलता भी पाई।

निष्कर्षतः मैं यह कहना चाहूंगा कि बिना किसी मौद्रिक लक्ष्य के किये जा रहे हमारे कार्य यदि प्रदर्शित करते हैं कि ग्रामीण समुदाय के रहन–सहन का स्तर उन्नत बनाते हुए गरीबी दूर करना संभव हो सकता है। टेकुर गांव की रहने वाली 70 वर्षीय महिला नागम्मा कहती हैं कि "ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी उन्मूलन एक नदी के समान है। अन्य संस्थाएं मानसून की धाराओं की तरह हैं, जो थोड़े समय में ही तेजी से आते हैं और एक सप्ताह के अन्दर ही गायब हो जाते हैं। हमें शान्ति एवं पूर्ण ढंग से अपने जीवन को बिताना होगा।" वास्तव में हरित अर्थव्यवस्था का यह लक्ष्य नहीं होना चाहिए।

■

पी०वी० सतीश
दक्कन डेवलपमेण्ट सोसायटी
आन्ध्र प्रदेश, भारत
ईमेल : satheeshperiyapatna@gmail.com

Greening the economy
LEISA INDIA, Vol. 14, No.2, Pg. # 6-9, June 2012